राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान राज्य द्वारा प्रकाशित

सामान्यत अखिल भारतीय तथा विशेषत राजस्थानदेशीय पुरातनकालीन
संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, राजस्थानी, हिन्दी आदि भाषानिबद्ध
विविध वाङ्मयप्रकाशिनी विशिष्ट ग्रन्थावलि

प्रधान सम्पादक

पद्मश्री जिनविजय मुनि, पुरातत्त्वाचार्य

[ऑनरेरि मेम्बर ऑफ जर्मन ओरिएन्टल सोसाइटी, जर्मनी]

सम्मान्य सदस्य

भाण्डारकर प्राच्यविद्या संशोधन मन्दिर, पूना, गुजरात साहित्य-सभा, अहमदाबाद;
विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध-संस्थान, होशियारपुर; निवृत्त सम्मान्य नियामक—
(आनरेरि डायरेक्टर), भारतीय विद्याभवन, बम्बई।

ग्रन्थाङ्क ६३

रावराजा बुधसिंह हाड़ा कृत

नेहतरंग

प्रकाशक

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

रावराजा बुधसिंह हाडा कृत

नेहतरंग

श्रीरामप्रसाद दाधीच, एम ए.

व्याख्याता (हिन्दी-विभाग)

जसवन्त कॉलेज, जोधपुर

प्रकाशनकर्त्ता

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

विक्रमाब्द २०१८ | प्रथमावृत्ति १००० | भारतराष्ट्रीय शकाब्द १८८३ | खिस्ताब्द १९६१ | मूल्य ४.००

मुद्रक—हरिप्रसाद पारीक, साधना प्रेस, जोधपुर.

RAJASTHAN PURATANA GRANTHAMALA

PUBLISHED BY THE GOVERNMENT OF RAJASTHAN

A series devoted to the Publication of Sanskrit, Prakrit, Apabhramsa, Old Rajasthani-Gujarati and Old Hindi works pertaining to India in general and Rajasthan in particular

*

GENERAL EDITOR

PADMASHREE JIN VIJAYA MUNI, PURATATTVACHARYA

Honorary Member of the German Oriental Society, Germany, Bhandarkar Oriental Research Institute, Poona, Vishveshvarananda Vaidic Research Institute, Hosiyarpur, Punjab, Gujrat Sahitya Sabha, Ahemdabad, Retired Honorary Director, Bharatiya Vidya Bhawan, Bombay, General Editor, Gujrat Puratattva Mandira Granthavali, Bharatiya Vidya Series, Singhi Jain Series etc etc

* *

NO. 63

NEHTARANG

Raoraja Budhsingh Hada of Bundi

* * *

Published

Undr the Orders of the Government of Rajasthan

By

The Director, Rajasthan Prachyavidya Pratishthana

(Rajasthan Oriental Research Institute)

JODHPUR (RAJASTHAN)

V S 2018] [*1961 A D*

सञ्चालकीय वक्तव्य

प्राचीन कालमें राजस्थानके अनेक विद्याप्रेमी शासकों और अन्य समृद्ध व्यक्तियोने विद्वानो तथा साहित्यकारोको विशेष प्रश्रय एव प्रोत्साहन प्रदान किया, जिसके परिणामस्वरूप राजस्थान साहित्य-क्षेत्रमे विशेष उन्नति प्राप्त कर सका है। ऐसे कुछ व्यक्तियोने स्वय भी साहित्यका निर्माण कर विद्वज्जगत्को अपनी साहित्यिक प्रतिभाका प्रत्यक्ष परिचय दिया है। ऐसे कवि-कोविदोंमे चौहानकुलोत्पन्न बूदी-नरेश रावराजा बुधसिहजी हाड़ाका नाम भी उल्लेखनीय है।

रावराजा बुधसिहजी और इनकी काव्यकृति 'नेहतरग' से विद्वज्जगत् अब तक प्राय. अपरिचित रहा है, क्योकि हमारे साहित्यिक आलोचना-विषयक अनेक ग्रन्थ वहुधा विना कड़ी जाँच-पड़ताल किये ही लिखे जाते हैं। ऐसे ग्रन्थोमें प्राय प्रचलित विषयोंकी पुनरावृत्ति मात्र होती है एव अनेक महत्त्वपूर्ण साहित्यिक कृतियो और उनके कर्त्ताओके नाम तक छूट जाते हैं।

'नेहतरंग' काव्याङ्ग-निरूपण विषयक एक विशेष कृति है। रचनाकालके केवल १ वर्ष पश्चात् सवत् १७८५मे लिखित इसकी एक प्राचीन प्रति श्रीरामप्रसादजी दाधीच, एम. ए व्याख्याता, हिन्दी-विभाग, जसवन्त कॉलेज, जोधपुरने हमें वताई तो हमने राजस्थानके राजकुलीन साहित्यकारका विशिष्ट रीति-ग्रन्थ होनेके नाते इसे 'राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला' मे प्रकाशित करना सहर्ष स्वीकार कर लिया और प्राप्य प्रतियोंके आधार पर इस कृतिका सम्पादन-कार्य भी श्रीदाधीचजीको उनकी रुचि और योग्यता देखते हुए सौंप दिया। परिणामस्वरूप यह अद्यावधि अप्रकाशित कृति विद्वज्जनोके हाथोमे पहुँच रही है। विद्वान् सम्पादकने पाठान्तर और छन्दानुक्रमणिका देनेके साथ ही अपनी अध्ययनपूर्ण प्रस्तावनामे कृति-सम्वन्धी अनेक ज्ञातव्य प्रस्तुत किये हैं, जिनसे ग्रन्थकी उपयोगिता और भी वढ़ गई है।

'नेहतरग' के प्रकाशन-व्ययका अर्द्धांश भारत सरकारके वैज्ञानिक और सांस्कृतिक मन्त्रालयने 'आधुनिक भारतीय भाषा-विकास-योजना' के अन्तर्गत प्रदान करना स्वीकार किया है, तदर्थ हम भारत सरकारके प्रति आभार प्रदर्शित करते हैं।

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान,
जोधपुर.
गांधी जयन्ती (ता २ अक्टूवर)
१९६१ ई.

मुनि जिनविजय
सम्मान्य सञ्चालक

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर

(Rajasthan Oriental Research Institute)

JODHPUR.

उद्देश्य

१. राजस्थान में और अन्यत्र भारतीय संस्कृति के आधारभूत संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, राजस्थानी, हिन्दी व अन्य भाषाओं मे लिखित प्राचीन ग्रंथों की खोज करना तथा उन्हें प्रकाश मे लाना।

२. प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों का संग्रह कर उनके संरक्षण की व्यवस्था करना और उपयोगी ग्रन्थों को सम्बन्धित विद्वानों से सम्पादित करा कर उनके प्रकाशन की व्यवस्था करना।

३. साधारणत भारतीय एवं मुख्यत. संस्कृत व प्राचीन राजस्थानी के अध्ययन, अन्वेषण, संशोधन हेतु अत्यावश्यक उत्तम प्रकार का सन्दर्भ पुस्तक भंडार (मुद्रित ग्रन्थालय) स्थापित करना और उसमे देश-विदेश मे मुद्रित विविध विषयक अलभ्य-दुर्लभ्य सभी ग्रन्थों का यथासम्भव संग्रह करना।

४ संगृहीत सामग्री से शोधकर्त्ता अध्येता विद्वानों को उनके अध्ययन और अनुसंधान मे सहायता पहुँचाना।

५. राजस्थान के लोक-जीवन पर प्रकाश डालने वाले विविध विषयक लोक-गीत, सांप्रदायिक भजन, पदादिक भक्ति साहित्य एवं सामाजिक संस्कार, धार्मिक व्यवहार तथा लौकिक आचार-विचार आदि से सम्बन्धित सभी प्रकार की सामग्री की शोध, संग्रह, संरक्षण, एवं प्रकाशन करने की व्यवस्था करना।

विषय-सूची



ग्रन्थकार

बूंदीनरेश रावराजा बुधसिंहजी हाडा

[जन्म म० १७५२ वि०, मृत्यु स० १७९६ वि०]

(चित्र का ब्लाक श्री सुखवीरसिंहजी गहलोत, जोधपुर के सौजन्य मे प्राप्त)

सम्पादकीय

राजस्थान की सास्कृतिक और साहित्यिक धरोहर भी उतनी ही समृद्ध और गरिमामयी है जितनी इसकी वीर-परम्परा। दूसरे शब्दो मे इस भाव को यो भी व्यक्त किया जा सकता है कि भारत की ऐतिहासिक और सास्कृतिक परम्पराओ को इसका समान योगदान रहा है। यहाँ तलवार और लेखनी की साधना समानान्तर चली है। हिन्दी साहित्य के आदिकाल और मध्यकाल को जो गरिमा और सम्पन्नता इस रसभूमि के सुकृती और यशस्वी कविर्मनीषियो ने प्रदान की है, इतिहास साक्षी है कि अन्य कोई प्रदेश ऐसा नही कर सका। किन्तु यहाँ यह कहने मे मुझे तनिक भी सकोच नही कि जिस प्रकार शस्य-श्यामला प्रकृति की अनुकम्पा से यह प्रान्त वचित रहा है वहा हिन्दीभाषी विद्वानो तथा साहित्य के तथाकथित इतिहासकारो द्वारा की गई उपेक्षाओ का बोझ भी इसे कम नही उठाना पडा है। इन तथ्यो को मैं आगे लूँगा। यहाँ इतना ही सकेत करूँगा कि क्या राजस्थानी भाषा के पृथक् अस्तित्व की दृष्टि से और क्या यहाँ के साहित्यकारो के अस्तित्व की स्वीकृति की दृष्टि से—इस प्रदेश को जो न्याय और सम्मान मिलना चाहिये था वह नही मिला। भाषा, साहित्य, इतिहास, गवेषणा के ग्रथ और अन्य खोज-रिपोर्टों (Search Reports) मे उल्लिखित सामग्री मे अनेक प्रकार की भ्रान्तियाँ यहा की डिंगल अथवा राजस्थानी भापा और साहित्यकारो को लेकर विद्यमान है, किन्तु अब ज्यो-ज्यो निष्पक्ष अध्ययन और अनुसन्धान हो रहा है त्यो-त्यो सत्य उद्घाटित होने लगा है।

इस प्रदेश मे साहित्य-सृजन का माध्यम दो भापाये रही हैं—डिंगल और पिंगल। और दोनो ही मे वीर, शृगार, भक्ति (सगुण और निर्गुण), प्रेम, नीति और रीति की जो वेगमयी रस-धाराये बही हैं वे हमारी अक्षय निधि हैं। कुछ समय तक हिन्दी के विद्वानो की यह धारणा थी कि राजस्थान मे मूलतः राजस्थानी अथवा डिंगल मे ही साहित्य-सृजन हुआ है, किन्तु अधुनातन साहित्यिक गवेषणाओ ने यह प्रकट कर दिया कि इस प्रदेश मे पिंगल मे भी सृजन कम नही हुआ। डा० मोतीलाल मेनारिया कृत पुस्तके, डा० नरनामसिंह शर्मा

'अरुण'[1], स्वामी नरोत्तमदास[2], डा कन्हैयालाल सहल[3], डा. हीरालाल माहेश्वरी[4], श्री अगरचद नाहटा प्रभृति विद्वानो की पुस्तके और निबन्ध इस सबन्ध मे पर्याप्त सामग्री प्रस्तुत करते है और यह निष्कर्ष निकलता है कि इस प्रान्त का पिंगल-साहित्य भी बहुत समृद्ध रहा है। डिंगल और पिंगल की साहित्यिक सर्जना के विस्तार मे जाना यहाँ मेरा अभिप्रेत नही है। मेरे द्वारा सम्पादित प्रस्तुत कृति 'नेहतरग', क्योकि पिगल मे लिखी गई है इसलिये यह प्रसग स्वाभाविक था।

पिंगल और डिंगल को लेकर आज भी कुछ अस्पष्टताये साहित्य-क्षेत्र मे प्रचलित हैं। 'नेहतरग' की भाषा की मूल प्रकृति को समझने के लिए यह अनिवार्य है कि दोनो का अन्तर समझ लिया जाय। पिंगल का एक अर्थ छन्द शास्त्र से भी लगाया जाता है। हमे इस अर्थ पर ध्यान नही देना है। आज पिंगल का सर्व-स्वीकृत अर्थ राजस्थानी मिश्रित व्रजभाषा है।[5] अस्तु यह स्पष्ट हो गया कि व्रजभाषा से तात्पर्य पिंगल से न होकर शुद्ध व्रजभाषा से है और पिंगल से तात्पर्य डिंगल अथवा राजस्थानी मिश्रित व्रजभाषा से है। डिंगल और पिंगल कतिपय सादृश्यो को लेकर सर्वथा पृथक् भाषा-भेद हैं, किन्तु दोनो की जन्मस्थली एक ही है और वह है राजस्थान। अब प्रश्न उठता है कि पिंगल शब्द का प्रचार कब से हुआ और इसे पिंगल सम्बोधन क्यो दिया गया? इस विषय मे की गई गवेषणाओ से अब यह स्पष्ट हो गया है कि १८ वी शताब्दी से पिंगल इस अर्थ मे प्रयुक्त होने लगी है। डिंगल शब्द पिंगल से बहुत प्राचीन है। यह प्राचीन ग्रथो से प्रकट होता है। किन्तु जैसा कि मैंने पहले लिखा है, दोनो की जन्मस्थली एक रही है अत दोनो मे कतिपय सादृश्य भी हैं। दोनो के छन्द शास्त्र और व्याकरण पृथक् होते हुए भी दोनो की मूल प्रकृति मे, व्याकरण के नियमो मे, शब्दकोष मे, छन्दशास्त्र मे समानताएँ है।[6] और इसका कारण शायद यही है कि दोनो का आदि-स्रोत एक (सस्कृत) है।

डिंगल और पिंगल के उपरोक्त परिचय के पश्चात् मैं राजस्थान मे पिंगल साहित्य की परम्परा पर भी कुछ पक्तियाँ लिखना चाहूँगा। जिस प्रकार

---

[1] राजस्थानी साहित्य, प्रगति और परम्परा।
[2] वेलि क्रिसन रुकमणी री महाराज पृथीराज री (भूमिका)।
[3] वीर-सतसई (भूमिका)।
[4] राजस्थानी भाषा और साहित्य।
[5] राजस्थान का पिंगल साहित्य— डा० मेनारिया, पृ न. १३, १४, १५।
[6] राजस्थान का पिंगल साहित्य, डा. मेनारिया, पृ स. १३, १४, १५।

डिंगल मे चरित्र-काव्य, पौराणिक-काव्य, भक्ति-काव्य, रीति-काव्य, नीति-काव्य और स्फुट काव्य को बडी ही स्वस्थ परम्परा रही है, उसी के समान यहाँ पिंगल मे भी उपरोक्त सभी धाराओ मे काव्य-सृजन हुआ है। पृथ्वीराज रासौ, खुमाण रासौ, राजविलास, सुजानचरित्र, वशभास्कर आदि पिंगल के ही चरित्र-काव्य हैं। अवतारचरित्र, वीरविनोद, पिंगल के पौराणिक प्रवन्ध काव्य हैं। राजस्थान मे भक्ति-भावना की अभिव्यक्ति भी पिंगल कवियो ने बडे ही कौशल के साथ की है। श्री नरहरिदास कृत अवतार-चरित्र, प्रतापकुवरि कृत रामगुणसागर राम-भक्ति के काव्य है। राजस्थान के पिंगल भाषा के कवि कृष्णदास पयोहारी और मीराँबाई अष्टछाप कवियो के समकालीन थे। भक्त कवि नागरीदास, हितवृन्दावनदास, व्रजनिधि आदि भी पिंगल के कृष्णभक्तिकाव्य मे अपना अपूर्व स्थान रखते हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ निर्गुण भक्ति की भी अनन्य धारा वही है। दादू-पथ, चरणदासी पथ, रामस्नेही पथ आदि के अनुयायी सत-महात्माओ की वाणियो के रूप मे निर्गुण भक्ति का अजस्र स्रोत बहा है और वह सब हमारे सन्त-साहित्य की अमर निधि है। नीति काव्य मे कवि वृन्द की 'वृन्द-सतसई' अत्यन्त लोकप्रिय रचना है। इनके अतिरिक्त और भी अनेक पिंगल कवि हुये हैं, जिन्होने नीति-सम्बन्धी मार्मिक सूक्तियो की रचना की है।

पिंगल मे सबसे अधिक परिमाण और गुणात्मकता मे जो साहित्य राजस्थान मे लिखा गया, वह है यहा का रीति-काव्य। रीति काव्य-निर्माण की परम्परा डिंगल मे भी रही है, किन्तु उसका आधार भी सस्कृत और प्राकृत-अपभ्र श काव्य ही रहा है। यहा पिंगल मे रचित रीतिकाव्य का मूल आधार तो सस्कृत और प्राकृत-अपभ्रश का साहित्य ही ह, किन्तु समकालिक हिन्दी रीति-आचार्यों का प्रभाव और अनुसरण भी स्पष्ट है। पिंगल के कतिपय कवियो पर डिंगल के रीति-काव्य का प्रभाव भी परिलक्षित होता है। उन्होनें डिंगल छन्द शास्त्र के लोकप्रसिद्ध छन्दो का और काव्य के अन्य उपादानो का प्रयोग अपनी प्रतिपादन शैली मे किया है।

पिंगल मे रीतिकाव्य लिखने वाले राजस्थान के पहले कवि जान थे।[१] यह जाति के मुसलमान थे। वि० स० १६७१–१७२१ इनका रचना-काल माना जाता ह। यह बहु-भाषा-विज्ञ थे और कहते हैं कि इन्होने सस्कृत, अरवी, फारसी, पिंगल आदि भाषाओ मे कुल ७५ ग्रथो की रचना की। इनकी पिंगल

---

[१] राजस्थान का पिंगल सहित्य।—डा० मोतीलाल मेनारिया, पृ० स० ८०।

अन्य प्रतियो से अधिक सुन्दर, स्पष्ट और शुद्ध है। अधिक काल की हो जाने के कारण जीर्णता इसमे अवश्य आ गई और १-२ पृष्ठ भी इसमे नही मिले। कई स्थलो पर कीटो ने भी इसे क्षत-विक्षत कर रखा है। अत [ख] और [ग] प्रतियो से छन्दो की पूर्ण सख्या देने और पाठान्तर प्रस्तुत करने मे मैने सहायता ली है।

'नेहतरग' एक रीतिकाव्य है। इसका वर्ण्य-विषय रस, नायक-नायिका, हाव-भाव, छन्द और अलकार है। शास्त्रीय भाषा मे इसे 'अनेकाग निरूपक' कृति कहेगे। पहले एक छन्द मे किसी एक काव्याग के लक्षण दिये गये है और फिर नीचे किसी दूसरे छन्द मे उसका उदाहरण दिया गया है। कृति के सम्पूर्ण वर्ण्य-विषय को कवि-आचार्य रावराजा बुधसिंह ने १४ तरगो मे विभक्त किया है। वह इस प्रकार है—

प्रथम तरग	अनुकूलादि नायक पद्मन्यादि नायिका-निरूपण।
दूसरी ,,	चतुर विधि दरसन निरूपण।
तीसरी ,,	नायका मुग्धा-मध्या-प्रौढा-धीरादि भेद निरूपण।
चौथी ,,	अष्ट नायिका निरूपण।
पाचवी ,,	मिलन-स्थान निरूपण।
छठी ,,	सखीजन कर्मचेष्टा स्वयदूती निरूपण।
सातवी ,,	मान-मोचन विधि निरूपण।
आठवी ,,	प्रवास विरह निरूपण।
नवी ,,	भाव हाव निरूपण।
दसवी ,,	रस निरूपण।
ग्यारहवी ,,	चतुरविधि कवित्त वृत्ति पचविधि अनरस कवित्त निरूपण।
बारहवी ,,	छह ऋतु निरूपण।
तेरहवी ,,	पिगल मत छन्द निरूपण।
चौदहवी ,,	अलकार निरूपण।

जैसा कि मैने ऊपर व्यक्त किया है रावराजा बुधसिह 'पिंगल के कवि-आचार्यों मे अपना विशिष्ट स्थान रखते है। अनुवर्ती परिच्छेदो मे अपनी मति के अनुसार मैं इनकी काव्यकला का अनुशीलन प्रस्तुत करने की चेष्टा करूँगा।

आचार्य बुधसिंह

बूदी का राज-परिवार शताब्दियो से साहित्यानुरागी रहा है। बूदी के नरेशो ने दो प्रकार से साहित्य की सेवा की है—एक, अपनी सृजन-प्रतिभा से

साहित्य का कोश अभिवृद्ध करके और दूसरे कवियो को राज्याश्रय देकर।[१] रावराजा बुधसिंह के अतिरिक्त राव विष्णुसिंह हाडा (वि० स० १८३०) और राव हनुमन्तसिंह हाडा (वि० स० १८८२) ने डिंगल और पिंगल दोनो मे उच्चकोटि का साहित्य सृजन किया। कहते हैं राव विष्णुसिंह ने वीर, भक्ति और शृगार भावना के दस हजार से भी अधिक छन्द बनाये।[२] इस राज-परिवार मे डिंगल, पिंगल और व्रजभाषा के अनेक लब्ध-प्रतिष्ठ कवियो को आश्रय भी प्राप्त हुआ। डूगरसी, पद्माकर, मतिराम, चडीदान, भोजमिश्र, बदनजी, निश्चलदास, सूरजमल मिश्रण, मुरारीदान और गुलाबजी राव जैसे कवि और आचार्य बूदी के राज्याश्रय मे रहे हैं। सस्कृत और व्रज-भाषा के अत्यन्त ख्यातिप्राप्त कवि श्री कृष्ण भट्ट और भोज मिश्र स्वय रावराजा बुधसिह के कई वर्षों तक आश्रय मे रहे।[३] बूदी के राज्य परिवार की साहित्य-परम्परा जब यह रही है तो उसमे रावराजा बुधसिह का होना कौनसे आश्चर्य की बात है ?

बुधसिंह का सागोपाग साहित्यिक जोवन-वृत्त आज भी प्राप्त नही है। हिन्दी साहित्य के प्राचीन इतिहास-ग्रथो[४] तथा हस्तलिखित ग्रथो की खोज-रिपोर्टों[५] मे इनके बारे मे जो भी सामग्री प्राप्त है वह इतनी अपर्याप्त और भ्रान्तिपूर्ण है कि इनके साहित्यिक व्यक्तित्व के सम्बन्ध मे निश्चित धारणा बनाना कठिन है। कही पर इन्हे बुध, कही पर बुधराव और कही पर बुधजन लिखा गया है। श्री श्यामसुन्दरदास बी० ए० द्वारा सम्पादित तथा काशी

---

१ (क) राजस्थान का पिंगल साहित्य, राजस्थानी भाषा और साहित्य।—डा० मेनारिया।
(ख) राजस्थानी साहित्य, प्रगति और परम्परा।—डा० अरुण।
(ग) राजस्थान के हिन्दी साहित्यकार। हिन्दी साहित्य परिषद्, जयपुर।

२ राजस्थान का पिंगल साहित्य।—डा० मेनारिया, पृ० स० १६०।

३ ईश्वर-विलास (भूमिका)।—प० मथुरानाथ भट्ट।
रा० प्रा० वि० प्रतिष्ठान, जोधपुर द्वारा प्रकाशित। पृ० स० ४१-४२।

४ (१) मिश्रबन्धु विनोद। भाग ४, पृ० स० ५३-५४।
(२) हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास।—डा० ग्रियर्सन, पृ० स० ११६।
(३) शिवसिंह सरोज।—ठा० शिवसिंह।

५ (१) राजस्थान मे हिन्दी के हस्तलिखित ग्रथो की खोज।—श्री अगरचन्द नाहटा।
(२) हस्तलिखित हिन्दी पुस्तको का सक्षिप्त विवरण, प्रथम भाग।
सम्पादक—श्यामसुन्दरदास, पृ० १०२।

नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित खोज रिपोर्ट[1] मे तो इनकी नेहतरग पुस्तक को किसी चन्द्रदास कवि द्वारा रचित वताया गया है। यहाँ तक कि रावराजा बुधसिंह द्वारा रचित 'नेहतरग' के १-२ छन्द भी[2] चन्द्रदास की नेहतरग के नाम पर दिये गये हैं। यह भ्रान्ति सभवत पद्य की तीसरी पक्ति मे 'चन्द्रहास' को 'चन्द्रदास' पढ लेने से हुई है। इससे ठीक विपरीत 'राजस्थान के हिन्दी साहित्यकार' (हिन्दी साहित्य सम्मेलन के जयपुर अधिवेशन के अवसर पर प्रकाशित) पुस्तक मे बुधसिंह की 'नेहतरग' को 'नेहनिधि' लिखा गया है।

जब परिस्थितियाँ यह रही हैं तो किस प्रकार कवि-आचार्य का समग्र साहित्यिक जीवन-वृत्त प्रस्तुत किया जाय ? हिन्दी साहित्य के आधुनिक और सर्वथा मान्यता-प्राप्त इतिहास ग्रथो मे इनका नामोल्लेख भी नही हुआ। दुर्भाग्य की पराकाष्ठा तब होती है जब रीतिकाल और रीतिकाव्य के अधिकारी पण्डित डा० नगेन्द्र द्वारा रीतिकाल और रीतिकाव्य पर लिखी पुस्तकें तथा उनके द्वारा सम्पादित काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा सद्य प्रकाशित इतिहास ग्रथ 'हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास' (षष्ठ भाग) भी बुधसिंहजी की उपेक्षा करते हैं।[3] बहि साक्ष्य की यह अवस्था है और अन्त साक्ष्य के रूप मे कवि ने अपने वारे मे कही एक भी पक्ति नही लिखी।

---

[1] The Second Terminal Report on the Search for Hindi Manuscripts (1906, 1907, 1908) Note No 38, Page No. 70, 71, 72

[2] निम्नाकित छन्द चन्द्रदास कृत नेहतरग मे भी वताये गये हैं जबकि यह श्री बुधसिंहजी की नेहतरग मे विद्यमान हैं—

(१) मदन-मोदकर- वदन सदन वेताल-जाल-व्रत।
भक्त-भीत-भजन अनेक जिन असुर-वस-हृत।
चन्द्रहास कर चट चडमुंडादि-रुहिरमय।
अनलझालजुत भाल लाललोचन विसाल जय।
जय जय अर्चित गुन-गान-अगम, आत्मसुख चैतन्यमय।
जय दुर्गतिहरण दुर्गा जननि, राजति नवरस रूपमय॥

(२) काजर के परमान चढी जु वढी अखिया भृकुटी चढि वाढी।
गात गुराई के रूप भई सु करी चढि लूटि नितवनि चाढी।
आइ अचानक दीठि वरी, सु वही मग कज कलिन्दि के ठाढी।
चपासी किधौ चन्द्रिकासी, मनो चन्द्रते चीर चीराकसी काढी॥

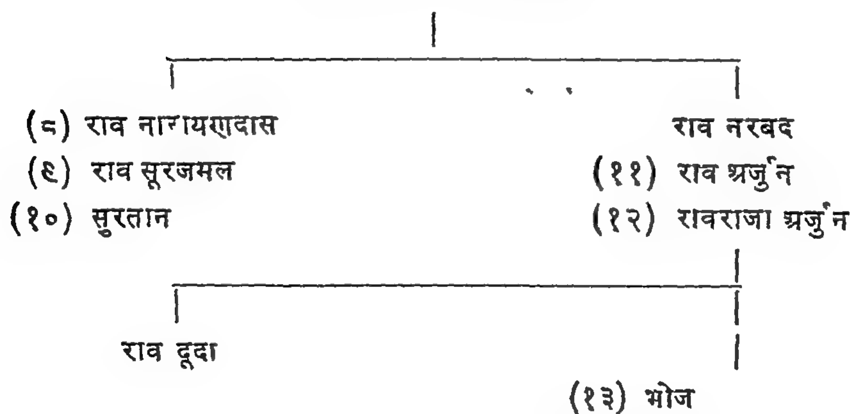
पृ० सं० ७०, ७१, ७२।

[3] रीतिकाव्य की भूमिका।—डा० नगेन्द्र।
देव और उनकी कविता।—डा० नगेन्द्र।
हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास (षष्ठ भाग)।—डा० नगेन्द्र, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

अस्तु जो कुछ सामग्री रावराजा बुधसिह के सम्बन्ध मे प्राप्त है वह उनके इतिहास-पुरुष और योद्धा जीवन के सम्बन्ध की है तथा राजस्थान के इतिहास पर लिखी पुस्तको मे उपलब्ध होती है। हमे भी परिणामस्वरूप इनके जीवन-वृत्त के लिये इतिहास-ग्रथो[1] का ही आश्रय लेना पडा है।

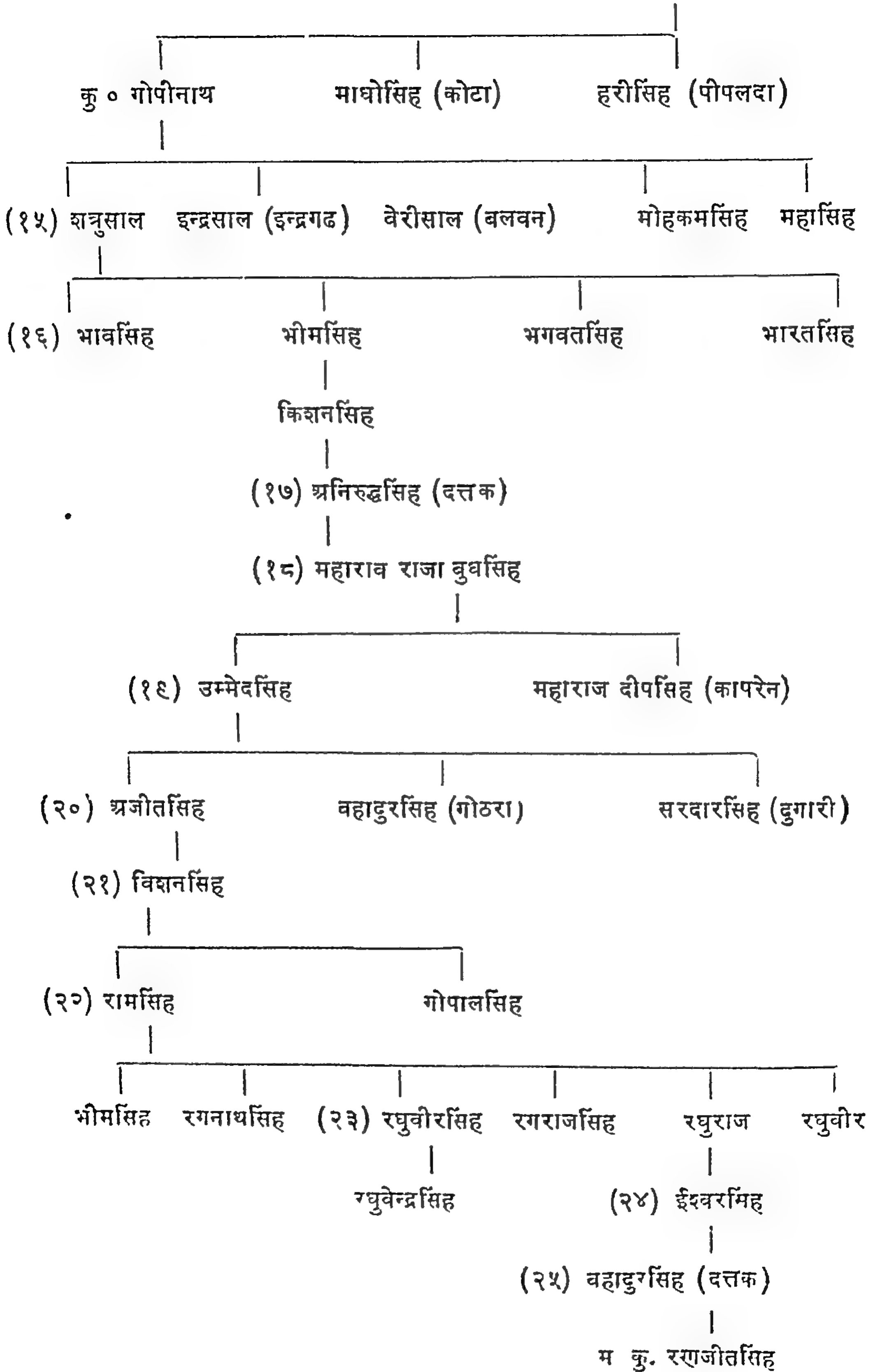
रावराजा बुधसिह का जन्म वि.स १७५२ मे बूदी मे ही हुआ। इनके जन्म और मृत्यु सवत् को लेकर इतिहासकारो मे कोई विवाद नही है। यह राव अनिरुद्धसिह के जेष्ठ पुत्र थे। नीचे दिए गए बूदी राज्य के वशवृक्ष से यह स्पष्ट है—

बून्दी राज्य का वश वृक्ष



---

१ (१) राजपूताने का इतिहास (गौ० ही० ओझा)
(२) वीर विनोद (कविराजा श्यामलदास)
(३) दि एनल्स ऐण्ड एन्टीक्विटीज ऑव राजस्थान (टॉड)
(४) पूर्व आधुनिक राजस्थान (डा० रघुवीरसिह)
(५) बूदी राज्य का इतिहास (जगदीशसिह गहलोत)
(६) बाकीदास री ख्यात (नरोत्तम स्वामी)


(१४) रतनसिंह सरबलन्द रावराजा
कु० गोपीनाथ
माधोसिंह (कोटा)
हरीसिंह (पीपलदा)
(१५) शत्रुसाल
इन्द्रसाल (इन्द्रगढ)
वेरीसाल (बलवन)
मोहकमसिंह
महासिंह
(१६) भावसिंह
भीमसिंह
भगवतसिंह
भारतसिंह
किशनसिंह
(१७) अनिरुद्धसिंह (दत्तक)
(१८) महाराव राजा बुधसिंह
(१९) उम्मेदसिंह
महाराज दीपसिंह (कापरेन)
(२०) अजीतसिंह
वहादुरसिंह (गोठरा)
सरदारसिंह (दुगारी)
(२१) विशनसिंह
(२२) रामसिंह
गोपालसिंह
भीमसिंह
रगनाथसिंह
(२३) रघुवीरसिंह
रगराजसिंह
रघुराज
रघुवीर
रघुवेन्द्रसिंह
(२४) ईश्वरसिंह
(२५) वहादुरसिंह (दत्तक)
म कु. रणजीतसिंह

जोधसिंह, अमरसिंह और विजयसिंह रावराजा बुधसिंह के छोटे भाई थे। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् केवल १० वर्ष की आयु मे ही यह बूंदी के राजसिंहासन पर आसीन हुये। उस समय दिल्ली के तख़्त पर औरगजेब आसीन था। राजस्थान की समस्त रियासतो ने मुगल-शासन का प्रभुत्व स्वीकार कर लिया था। बूंदी रियासत भी कोई अपवाद नही थी। बूंदी के हाडा-नरेशो पर तो औरगजेब की विशेष कृपा थी। बहुत कम आयु मे ही यह औरग-जेब की इच्छानुसार शाहजादे बहादुरशाह आलम के साथ काबुल मे रहने लग गये थे। यह बहुत ही स्वाभिमानी थे और हाडावश का पवित्र रक्त इनकी शिराओ में प्रवाहित था। कहते हैं, एक बार काबुल मे किसी मुसलमान सरदार ने इन्हे अनुचित वचन कह दिये थे। इन्होने उसी स्थल पर कटारी से उसका अन्त कर दिया।

औरगजेब उन दिनो अस्वस्थ था और दक्षिण मे औरगाबाद मे विश्राम कर रहा था। उसका अन्तकाल निकट देख कर अधिकारियो ने उससे निवेदन किया कि वह अपना कोई उत्तराधिकारी मनोनीत कर दे। औरगजेब ने उत्तर दिया—"यह खुदा ताला के हाथ में है। उसकी इच्छा है कि बहादुरशाह आलम तख़्त पर बैठे[1]।" किन्तु औरगजेब की मृत्यु के पश्चात् उसके लडको मे तख़्त के लिए झगडा हुआ और आजम, जो औरगजेब का सब से छोटा लडका था, अपनी षडयत्रकारी प्रवृत्ति और नीचता मे सफल हो कर तख़्त पर बैठ गया। उसने बूंदी सूचना भेजी कि यदि बूंदी की रक्षा चाहते हो तो अपनी सेना लेकर दिल्ली चले आओ। उस समय राव बुधसिंह तो काबुल मे थे, परिणामत आजम ने कोटा के राव रामसिंह को बूंदी का राज्य सौंप दिया। उसे महाराव की पदवी से भी विभूषित किया।

बुधसिहजी के जीवन मे उस समय एक और दुखद घटना घटित हुई। उनके छोटे भाई जोधसिंह जो इतिहास मे एक शूरवीर, साहसी और पराक्रमी के रूप मे उल्लिखित हैं, का एक दुर्घटना मे अचानक देहान्त हो गया। वे गणगौर के त्यौहार पर अपनी पत्नी सहित जैतसागर (बूंदी का एक सरोवर) मे नौकानयन कर रहे थे। किसी उन्मत्त हाथी ने इनकी नौका उलट दी और वे अपनी पत्नी-

---

१ दि एनल्स एण्ड एन्टीक्विटीज ऑव राजस्थान।

—टॉड। पृ० सं० ३९०, ९१, ९२, ९३, ९४।

सहित डूब कर स्वर्गवासी हो गये।[1] अपने भाई के इस अनायास दुखद अन्त ने बुधसिंहजी को बडा गहरा आघात पहुँचाया। आलम ने इन्हे बूदी जाकर अपने मृत भाई के अन्तिम सस्कार करने के लिए कहा, किन्तु तब आजम बहादुरशाह आलम को युद्ध के लिए ललकार चुका था। परिस्थिति बडी नाजुक थी। बुधसिहजी मे वहादुरशाह आलम के प्रति अटूट विश्वास था। सच्चा राजपूत यो भी कभी विश्वासघात नही करता। बुधसिहजी ने अपनी इस क्षति की मर्मान्तिक पीडा को भुला कर एक योद्धा के स्वर मे उत्तर दिया "मेरा कर्तव्य इस समय बूदी के लिये मेरा आह्वान नही कर रहा, अपितु धौलपुर की रण-स्थली मे अपने स्वामी की सेवा करने का आह्वान कर रहा है—उस धौलपुर की भूमि मे जो अनेक युद्धो के लिये इतिहास मे प्रसिद्ध है और अपने कर्तव्य के प्रदर्शन मे जहाँ अनेक वीरो ने अपने प्राणो की आहुतियाँ देकर उस भूमि को अपनी स्मृतियो का एक तीर्थस्थल बना दिया है[2]।"

यहाँ यह स्मरण रखना है कि तब बुधसिहजी की आयु केवल १२ वर्ष की थी। आलम इस वीरतापूर्ण उत्तर को सुन कर बहुत प्रसन्न हुआ। बुधसिहजी ने इस अवसर पर यह भी कहा, "इसी रणभूमि मे मेरे पूर्वज शत्रुसाल ने वीरगति प्राप्त की है। मैं उनकी कीर्ति को अक्षय करना चाहता हूँ। मुझे विश्वास है कि भगवान् की कृपा से विजयश्री हमारे हाथ लगेगी।[3]"

अन्तत धौलपुर के निकट 'जाजोव' की युद्धभूमि पर आजम और आलम की सेनाएँ तख्त के उत्तराधिकार का निर्णय करने के लिये एकत्र हुईं। आलम के पक्ष मे जयपुर, जोधपुर और कोटा की सेनाएँ थी और आजम की सहायता के लिये कोटा, दतिया और दक्खन से सेनाएँ आई। आजम का पुत्र वेदरबख्त भी अपने पिता के साथ था।

जेम्स टॉड ने अपने इतिहास ग्रथ के Annals of Haravati (Bundi) अध्याय मे लिखा है कि यह युद्ध बडा रोमाचकारी था। इस युद्ध मे राजपूताने के राजाओ का पारस्परिक वैमनस्य और उनके चारित्रिक पतन का प्रदर्शन भी

---

१ बूदी राज्य का इतिहास (श्री जगदीशसिंह गहलोत)।—पृ० स० ७८।
दि एनल्स एण्ड एन्टीक्विटीज ऑव राजस्थान। टॉड। पृ० स० ३९२, ९३।
[इसी घटना के फलस्वरूप राजस्थान की यह कहावत प्रचलित हुई—
"हाडो ले डूब्यो गरागौर"।]

२ दि एनल्स एण्ड एन्टीक्विटीज ऑव राजस्थान। टॉड।

३ ,, ,,।—पृ० स० ३९३।

हुआ। क्षुद्र प्रलोभन मे पड कर राजा लोग किस प्रकार न्याय और मानवीय मूल्यो को भूल जाते थे—यह युद्ध इसका साक्षी है।

कोटा के राजा रामसिह औरगजेब की स्मृति तथा आलम के साथ विश्वासघात कर इस युद्ध मे आजम की ओर से लड रहे थे। इन्होने बुधसिहजी के पास एक सूचना इस आशय की भेजी कि तुम आलम का साथ छोड कर आजम के पक्ष मे आ जाओ अन्यथा तुम्हे वहुत हानि उठानी पडेगी। वीर बुधसिहजी ने अपने उच्च चरित्र के अनुकूल वहुत उपयुक्त उत्तर भिजवाया, "मैं कायर नही हूँ। जिस युद्ध-भूमि पर मेरे पूर्वजो ने वीरगति प्राप्त कर हाडा वश की कीर्ति को अक्षय रखा है, उस स्थान पर मैं अपने मित्र का साथ छोड अपनी कुल-कीर्ति को कलकित करना नही चाहता एक वीर का यह धर्म नही है।"[१]

युद्ध हुआ—वहुत ही विकट। बुधसिहजी ने इस युद्ध में जिस वीरता का प्रदर्शन किया उसका उल्लेख प्रसिद्ध कवि दूलह ने एक छन्द मे इस प्रकार किया है—

जुद्द जाजऊ के वुद्ध ये सक्रुध उघ,
आजम के महावीर काटि डारे नजासे से।
हेरु कवि 'दूलह' समुद्र वढ़े श्रोनित के,
जुग्गिन परत फिरैं जंवुक अजासे से॥
एक लीन्हे सीस खाय, वेष ईम एकन को,
एकन को उपमा निहारी मनु उदासे से।
अघ फरे फैलि फैलि कर मे विराजे मानो,
माथे सुभट्टनके तरासे तरवूजा से॥

एक दूसरे कवि रूपसहाय ने जो सम्भवतः बूदी के ही थे, इस युद्ध मे दिखाई गई बुधसिहजी की वीरता का वर्णन इस प्रकार किया है—

जाडीसी में पकरि हजारी मारो हाक हाक,
देखोजी तमासो वीर वूदी के दोवान को।
बारैही वरस के वजाय लोह छोह कियो,
हाड़ा चहुवान पृथ्वीराय के ननमान को॥
कहै 'रूपसहाय' जाको आलम मलाम करे,
देखत तमासो रथ रुक गयो भान को।

---

१ दि एनलस एण्ड ऐंटीक्विटीज ऑव राजस्थान। टॉड। पृ० सं० ३९१, ९२, ९३, ९४।
बूंदी राज्य का इतिहास। श्री जगदीशसिंह गहलोत।—पृ० स० ७८।

याही विधि अनर अमानो राव बुधसिंह,
खजर सो फारि डारो पिंजर पठान को ॥
× ×
रहत अछक्क पै मिटै न धक पीबन की,
निपट जुनागी डर काहू के डरै नही।
भोजन बनाये नित चोखे खान खानन के,
श्रोनित पचावे तऊ उदर भरै नही ॥
उगलित आसो सोऊ शुकल समर बीच,
राजे राव बुधकर विमुख परै नही।
तेग या तिहारी मतवारी की अचक जौलों,
... .. गजराजन को गजक करै नही ॥

उपरोक्त छद बुधसिंहजी के वीर चरित्र पर पूर्ण प्रकाश डालते हैं। निदान आजम की सेनाये रणखेत रही। कोटा के राव रामसिह और दतिया के राजा दलपत भी इस युद्ध मे वीरगति को प्राप्त कर गये। आजम का पुत्र भी बुधसिंहजी की तीक्ष्ण तलवार के घाट उतर गया। आलम का विजयलक्ष्मी ने वरण किया और वह दिल्ली के तख्त पर आसीन हुआ। यह सफलता अकेले बुधसिंहजी के भुज-बल का प्रमाण थी—सभी इतिहास ग्रथ इसके साक्षी हैं।

बुधसिहजी की इस वीरता और वफादारी पर आलम का प्रसन्न होना स्वाभाविक था। उसने इन्हे महाराव राजा की पदवी से विभूषित कर ५४ परगने भेट किये। कोटा भी उनमे से एक था। बुधसिहजी ने बूदी के सरदारो को यह आदेश दिया कि वे कोटा पर अपना अधिकार करलें। आज्ञानुसार मोकमसिंह, जोगीराम आदि ने कोटा पर आक्रमण किया किन्तु वे सफल नही हुये। कोटा के राव भीमसिहजी ने कोटा बचा लिया और बूदी और कोटा की शत्रुता और भी प्रगाढ हो गई।

बुधसिहजी के जीवन मे और भी अनेक दुखद घटनाये घटी। बहादुरशाह आलम की सन् १७१२ में मृत्यु हो गई। यह घटना भी इनके लिये महान् कष्टदायी थी। अपने परम मित्र आलम का अभाव इन्हे जीवन भर खलता रहा। आलम की मृत्यु के पश्चात् फरुखसायर तख्त पर बैठा, किन्तु बुधसिहजी राजगद्दी समारोह मे सम्मिलित नही हुए। इस पर बादशाह बहुत नाराज हुए और उन्होने कोटा के महाराव को बूदी का राज्य दे दिया। यह घटना भी बडी पीडक थी। बुधसिहजी को अपना राज्य पुन प्राप्त करने का शीघ्र ही अवसर मिला। फरुखसायर और उसके प्रधान मत्री सैय्यद बन्धुओ में अनबन हो गई। सैय्यद बन्धु महाराव भीमसिह से मिल कर बादशाह की हत्या का षडयत्र रच

रहे थे। बुधसिंहजी ने तब बादशाह का साथ दिया और उन्हे बादशाह ने प्रसन्न कर बूंदी का राज्य दे दिया।

फरुखसायर और सैय्यद बन्धुओ मे जो अनबन प्रारम्भ हुई थी, उसका अन्त आखिर फरुखसायर की मौत के साथ हुआ। अब बूंदी नरेश बुधसिंह और आमेर नरेश सवाई जयसिंह का दिल्ली के शाही दरबार मे प्रभाव नही रहा। सैय्यद बन्धु भी इन्हे प्रभावहीन करना चाहते थे। सैय्यद बन्धुओ ने महाराव भीमसिंह को बूंदी का पुन अधिकार दिलवा दिया। जब तक भीमसिंह जीवित रहे तब तक बूंदी पर कोटा का ही अधिकार रहा। राव बुधसिंहजी अपने ससुराल आमेर मे सब ओर से निराश होकर रहने लगे।

भीमसिंहजी की मृत्यु के पश्चात् अपने साले सवाई जयसिंह की सहायता से उन्होने पुन बूंदी पर अधिकार कर लिया। तभी एक और दुखद घटना घटी[1], जिसने साले और बहनोई के स्नेह-सूत्रो में स्थायी व्यवधान पैदा कर दिया।

बुधसिंहजी ने कुल चार विवाह किये थे (उदयपुर, जयपुर, बेगूं (मेवाड) और भिणाय (अजमेर)। इनका प्रथम विवाह महाराजा सवाई जयसिंह की बहिन अमरकुँवरी के साथ हुआ था। यद्यपि अमरकुँवरी की मँगनी पहले बहादुरशाह से हुई थी किन्तु बादशाह ने प्रसन्न होकर अपने मित्र बुधसिंहजी से इसका विवाह करा दिया। इस कछवाही रानी के कोई सन्तान नही थी। बेगू की चूडावत रानी से इनके दो राजकुमार थे अत कछवाही रानी बडी अप्रसन्न रहती थी और ईर्ष्या की अग्नि मे जलती रहती थी।

कुछ इतिहास ग्रथो में ऐसा भी उल्लेख मिलता है कि नित्यनाथ नामक किसी कनफटे जोगी के उपदेश तथा पुरोहित गजमुख की प्रेरणा से बुधसिहजी वाममार्गी बन गये थे। कछवाही रानी क्योकि वैष्णव धर्मानुयायिनी थी, अत उसे यह सब बुरा लगा। उसने एक षडयत्र रचा। सभव है यह षडयत्र न होकर सत्य भी हो। उसके गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न हुआ और उसने यह कहा—यह बुधसिंहजी का अश है। इस पर बुधसिंहजी ने उसका बडा अपमान किया।

- सवाई जयसिंह अपना और अपनी बहिन का अपमान कैसे सहन करते ? बूंदी पर अधिकार के लिये पुन युद्ध हुआ। जयसिंह की सेनाओ को सफलता मिली। बूंदी फिर बुधसिंहजी के हाथ से चली गई।

---

१ (१) बूंदी राज्य का इतिहास, श्री गहलोत। पृ० स० ८०।
(२) दि एनल्स एण्ड ऐंटीक्विटीज ऑव राजस्थान, टॉड। पृ० स० ३९३।

बुधसिंहजी के हृदय पर इन घटनाओ का बडा गहरा असर हुआ। एक प्रकार की उपेक्षा और वैराग्य-प्रवृत्ति का उनमे उदय होने लगा—अनन्त निराशा उनमे क्रियाशील हो उठी। किन्तु राजपूत का शौर्य्य और साहस उनमे समाप्त नही हुआ। परिस्थितियो से वे यो परास्त नही हुये और उन्होने अन्यायी के समक्ष, चाहे वह उनका रिश्तेदार भी था, कभी मस्तक नही झुकाया।

वे अब अपने ससुराल बेगू मे रहने लगे थे। सवाई जयसिंह ने करवड के सरदार सालमसिंह के पुत्र दलेलसिंह को वि० स० १७८६ मे बूदी की राज्यगद्दी सौंप दी। अपने सम्बन्धो को प्रगाढ करने के लिये अपनी पुत्री का विवाह भी उनके साथ कर दिया।

बुधसिंहजी अन्त तक बूदी पर अपना अधिकार बनाये रखने के लिये सक्रिय रहे। उनकी चूडावत रानी ने भी उनकी सहायता की।

इतिहास मे ऐसा प्रमाण मिलता है कि राजस्थान मे मराठो का सर्व प्रथम प्रवेश बूदी की प्रेरणा से ही हुआ। इसके लिये कौन उत्तरदायी है? क्या बुधसिंहजी? क्या उनकी चूडावत रानी? उत्तर स्पष्ट है—राजस्थान की तत्कालीन कुटिल राजनीति। दलेलसिंह के भाई प्रतापसिंह, जो अपने भाई से क्रुद्ध था, के निवेदन और प्रेरणा पर, मल्हार राव होल्कर तथा राघोजी सिन्धिया की सेनाओ ने बूदी पर आक्रमण किया और बूंदी पुन जयपुर के हाथ से चली गई। किन्तु मराठो के जाने के पश्चात् पुन सवाई जयसिंह की सेनाओ ने बूदी पर आक्रमण कर दलेलसिह को राजसिंहासन पर बैठा दिया।

उपरोक्त सारा घटना-क्रम यह सिद्ध करता है कि बुधसिंहजी का जीवन कभी शान्ति और विश्राम का नही रहा। जीवन के अन्तिम १० वर्ष वे अपने ससुराल बेगू मे ही रहे। इनके साले रावत देवीसिहजी ने इनकी बहुत ही सहायता की। उनके प्रति अपनी कृतज्ञता स्वय बुधसिंहजी ने राजस्थानी भाषा में रचे अपने दोहे मे इस प्रकार व्यक्त की है—

> धर पलटी पलटयौ धरम, पलटयौ गोत निशक।
> देव हरिचद राखियो, अधिपतियाँ सिर अग॥

अपने मानसिक आघातो को विस्मृत करने के लिये जीवन के अन्तिम काल मे वे मदिरा और अफीम का अत्यधिक सेवन करने लगे। कहते हैं कि इन मादक द्रव्यो के अति प्रयोग से वे अन्त मे पागल हो गये और वैशाख कृष्णा ३ वि० स० १७९६ को उनका अवसान हो गया। श्री० गौ० ही० ओझा के मतानुसार (उदयपुर राज्य का इतिहास) बेगू से ६ मील दूर बाघपुरा मे इनका देहान्त हुआ।

रावराजा बुधसिंहजी के जीवन और चरित्र को लेकर विभिन्न इतिहासकारो मे विभिन्न प्रतिक्रियाये हुई हैं। डा० रघुवीरसिंह ने अपने ग्रथ 'पूर्व आधुनिक राजस्थान' मे इन्हे 'मदिरा और अफीम के नशे मे चूर रहने वाला एक दुर्व्यसनी और आलसी शासक' कहा है। विद्वान् लखक के पास इस कथन के क्या प्रमाण रहे हैं, कह नही सकते। सभव है जयपुर राज्य के अभिलेख-सगहालय से उन्हे ऐसी सामग्री मिली हो, किन्तु टॉड, ओझा, कविराजा श्यामलदास, सूर्यमल्ल मिश्रण, मुशी देवीप्रसाद और गहलोत आदि ने कही पर भी ऐसा उल्लेख नही किया।

सूर्यमल्ल मिश्रण ने अपने ऐतिहासिक महाकाव्य वशभास्कर मे[1] बुधसिंहजी की प्रशस्ति मे इस प्रकार लिखा है—

"इम लियउ बुद्ध पट्टाभिषेक,
थपि राज्यअग बसि हुकम एक।
सित रोमगुच्छ ढरि दुदिस सीस,
कनकातपत्र भूषित महीस ।। २०
आवाप तत्र चितन उपेत,
सुभ वल विदग्ध-धी सख समेत।
पभद्दु सधि यान बिग्रह विलास,
द्वैधाऽऽसन आश्रय गुन प्रकास।
प्रभु मत्र-शक्ति उत्साह पूर,
सम चतरुपाय सामर्थ्य सूर।
सविचार व्यसन सप्तक निषेधि,
बानैत बान बिन लेत वेधि।
विधि च्यार हेति कोविद-विनोद,
चतुरग चक्र साधन समोद।
जुत धर्म्म नीति अवसर जमाय,
लोकानुराग नयरीति लाय।
इत्यादि रागगुन जोर जग्गि,
बुधसिंह वढिय जनु अनिल अग्गि।
हुव बिदित क्षित्ति दिस दिसन हाक
अकि बाकि अराति रुकि वद न वाक।

---

[1] वशभास्कर (बुद्धसिंह चरित्र प्रकरण)—पृष्ठ २८६९–२९०० सूर्यमल्ल मिश्रण।

उपरोक्त वर्णन केवल कवि-उक्ति ही नही है। यह एक इतिहासकार की वाणी भी है। वशभास्कर ऐतिहासिक सन्दर्भ-ग्रथ भी माना जाता है। बुधसिहजी एक उच्च-चरित्रवान शासक, वीर योद्धा और साहित्यानुरागी व कारयित्रि प्रतिभा के व्यक्ति थे, इसका प्रमाण उनके यहाँ आश्रय-प्राप्त सस्कृत और ब्रजभाषा के प्रकाण्ड विद्वान् तथा कवि श्री कृष्णभट्ट[1] की कृतियो मे विद्यमान अशो से मिलता है। सस्कृत भाषा मे रचित अपनी पद्यमुक्तावली[2] में श्री भट्टजी ने बुधसिहजी का प्रशस्ति-गान इस प्रकार किया है—

"देव श्रीवुद्धसिंह त्वदसिजलधरोल्लासिसत्कीर्तिनीरे,
तुङ्गप्राच्यादितीरे भवसरसि भवत्साधुवादोर्मिसघे।
नक्षत्राण्येव हसाः परिलसितनभोनीलिमा शैवलाघ,
पूर्णेन्दु पद्ममस्मिन्, मधुरमधु सुधा, देववृन्दा मिलिन्दा ॥

[हे देव श्री वुद्धसिंह ! तुम्हारे असिरूपी जलधर से उल्लसित कीर्तिरूपी नीर मे—जो प्राच्यभूमि के तट पर प्रवाहित है और जो भव-सरोवर को आपूरित कर रहा है और जिसमे साधुवाद की उर्मियाँ तरगित हैं, नक्षत्र ही मराल प्रतीत होते हैं, सुन्दर नभ की नीलिमा ही शैवाल-जाल है, पूर्णचन्द्र ही कमल है और उसका मधुर मधु ही अमृत हैं। इसका पान देववृन्द भ्रमर के समान कर रहे हैं।]

उपरोक्त रूपक मे भले ही अतिशयोक्ति हो किन्तु श्री भट्ट ने बुधसिहजी के चरित्र-सत्य को झुठलाया नही है। श्री भट्ट 'लाल कवि' के नाम से पिंगल मे भी कविता लिखा करते थे। उन्होने एक कवित्त मे भी बुधसिहजी का कीर्ति-गान किया है—

राव अनिरुद्धसिंहजू के राव बुद्धसिंह,
रावरे सवल दल चलत तमक सों।

---

१ श्री कृष्णभट्ट—ये तैलग ब्राह्मण थे। वि० स० १७२५ मे इनका जन्म हुआ। यह सस्कृत और ब्रजभाषा दोनो के प्रकाण्ड विद्वान थे और काव्य-रचना करते थे। यह श्री बुधसिंह के यहा काफी वर्षों तक आश्रित रहे। इनकी इच्छा से इन्होने ब्रजभाषा मे रीतिकाव्य के दो ग्रथो (शृंगार-रसमाधुरी और विदग्ध-रसमाधुरी) की रचना की। इन्होने सस्कृत में भी अनेक काव्य ग्रथ लिखे—ईश्वरविलास और पद्यमुक्तावली उनमे प्रमुख हैं। जयपुर के महाराज सवाई जयसिंहजी इन्हे अपने यहाँ बुधसिंहजी से माग कर ले गये। निम्नांकित दोहा इसका प्रमाण है—

बूंदीपति बुधसिंह सौं, लाये मुख सौं जाँचि।
रहे आइ आंवेर मे, प्रीति रीति बहु भाँति ॥

२ पद्यमुक्तावली—श्री कृष्णभट्ट
[राजस्थान प्राच्य प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित] पृ०सं० ८।

'लाल कवि' तितके भुवाल पयमाल होत,
खूंदे हयमाल खुरतालकी झमक सो।
भारे होत बारिधि अध्यारे धूरधार उजि-
यारे दामिनी के असि कारेकी दमकसौं।
गारे परैं नदिन पगारे परैं बारिधिन,
गारे परैं अरिन नगारे की धमकसौं।
(अलकार कलानिधि)

बुधसिहजी ने नेहतरग के अतिरिक्त और कोई काव्य-ग्रथ लिखा हो ऐसा प्रमाण अभी प्राप्त नही हुआ है। हाँ, उनके द्वारा समय-समय पर रचित स्फुट छन्द अवश्य मिले हैं। 'राजस्थान के हिन्दी साहित्यकार' पुस्तक मे बुधसिहजी द्वारा रचित वीररस का एक छन्द उनके परिचय के प्रसग मे दिया गया है। वह इस प्रकार है—

दैत-दिलीपति मीर महाजल, सैद हिलोरनतें अति बाढी।
हिन्दुन की हद दाबि दसो दिसि, तेज तुरक्क तरगम चाढी।
मारु-महीप अभू-अवतार है, धीरज धार गही खग गाढी।
यो कहि वुद्ध अजीत बहार है, बूडी धरा कमधज्ज ने काढी ॥[1]

कवि का सघर्षमय जीवन ही इस बात का प्रमाण है कि उन्हे साहित्य-सृजन के लिये अवकाश बहुत कम मिला। अपने जीवन के अन्तिम १०-१२ वर्षों को छोड कर वे अपने बाल्य-काल से ही दुर्भाग्य और परिस्थितियो से जूझते रहे। उनके कवच, ढाल और तलवार ने कभी एक क्षण को विश्राम का अनुभव नही किया। तब भला उन्हे लेखनी चलाने का अवसर कब मिलता? नेहतरग की रचना इसी अन्तिम काल मे हुई है, ऐसा पुस्तक मे वर्णित एक दोहे से प्रकट है—

सतरहसै चौरासिया, नवमी तिथि ससिवार।
सुक्ल पक्षि भादौं प्रकट, रच्यौ ग्रथ सुषसार ॥
(नेहतरग, छ. स ५३६)

यह भी सभव है कि इसके कुछ अशो की रचना पहले करली गई हो और इसे पूर्णता उपरोक्त तिथि को मिली हो।

काव्य-विवेचना

ऊपर लिखा जा चुका है कि नेहतरग रीतिकाल मे रचित एक रीतिवद्ध लक्षण-ग्रथ है और इसमे वे समस्त सामान्य प्रवृत्तियाँ और विशेपताये विद्यमान

---

[1] राजस्थान के हिन्दी साहित्यकार—हिन्दी साहित्य परिषद्, जयपुर।

हैं जो रीतिकालीन अन्य कवियो की कृतियो मे रही हैं। भाषा, विषय और प्रतिपादन शैली– किसी भी दृष्टि से इस कृति को कोई विशिष्ट रचना नही कहा जा सकता और यह सत्य केवल इस कृति के लिये ही नही अपितु इस काल मे विरचित अधिकाश हिन्दी रीति-ग्रथो के बारे मे कहा जाता है। इस काल के प्रमुख प्रतिपाद्य रस, नायिकाभेद, नखशिख, अलकार और छन्द रहे हैं। नेहतरग मे भी यही सब कुछ है। राधा और कृष्ण के आलम्बन से [न तु राधा कृष्ण सुमिरण को बहानो है] श्री बुधसिह ने भी शृगार का ही प्रतिपादन किया है और वे सर्वत्र अपने काल की कवि-परम्पराओ का पालन करते हुये प्रतीत होते हैं। हा, एक अन्तर-रेखा अवश्य इनके और अन्य कवियो के बीच मे है और वह है अभिव्यजना की मार्मिकता जो इन्होने काव्याग के उदाहरण मे स्व-रचित छन्दो मे प्रकट की है। मैं नीचे सोदाहरण अपने मत की पुष्टि करने की चेष्टा करूँगा।

कविता के पक्ष—

नेहतरग के आधार पर श्री बुधसिह के काव्य के दो पक्ष स्पष्ट हैं—१ शृगारिक पक्ष और २ आचार्य पक्ष। इनके द्वारा रचे गये वीररस और नीति के स्फुट काव्य का हम यहा उल्लेख नही करेंगे। शृगार रस के विवेचन मे इन्होने इस रस के समस्त उपकरणो का वर्णन किया है—सयोग, वियोग, नायक-नायिका-भेद, हावभाव, ऋतु-वर्णन आदि और इन सब मे मानवीय भावो की मार्मिक अभिव्यक्ति के साथ रसो का उत्कृष्ट परिपाक हुआ है। इस काल के कवियो का शृगारिकता के प्रति दृष्टिकोण भोगपरक था अस्तु वे पवित्र प्रेम के उदात्त तत्वो की ओर नही जा सके। वे अपने काव्य मे केवल ऐसे उपकरण जुटाते थे जो नारी-सौन्दर्य के शारीरिक पक्ष को सर्वाधिक आकर्षक बना सके। श्री बुधसिह भी इस सामान्य प्रवृत्ति के अपवाद तो नही हैं किन्तु फिर भी इनका शृगार-वर्णन मात्र शारीरिक वर्णन नही है। देव का, जो अनुमानत श्री बुधसिह के समकालीन थे, एक सवेगात्मक रूप-चित्रण नीचे देखिए—

जगमगे जोबन जराऊ तरिवन कान,
ओठन अनूठो रस हाँसी उमडे परत।
कचुकी मे कसे आवें उकसे उरोज बिंदु,
बदन लिलार बडे बार घुमडे परत।
गोरे मुख स्वेत सारी कचन किनारीदार,
'देव' मणि झूमका झमकि झुमडे परत।

बडे बडे नैन कजरारे बडे मोती नथ,
बडी वरुनीन होडाहोडी अडे परत ॥[1]

उपरोक्त रूप-चित्र कितना इन्द्रियोत्तेजक और रूपासक्तिपूर्ण है, सहृदय इसका अनमान सहज ही लगा सकते हैं। देव मे सयम और नियत्रण का अभाव था अत सभव है यह पूर्ण रूप से उनकी वैयक्तिक प्रतिक्रिया हो। इसमे सौन्दर्य-चेतना का अभाव है और इसीलिये भावनात्मकता इसमें नही आ पाई। यह आरोप अकेले देव पर नही है, रीतिकाल के अन्य अनेक कवियो मे इस प्रवृत्ति के दर्शन होगे। श्री बुधसिंह मे अपेक्षाकृत सौन्दर्य चेतना और भावनात्मकता है। निम्नाकित छन्द इसका उदाहरण है—

अगनसो इत रगनसौं, उभलै अग चादिनीसी छवि छाई।
नैननितै प्रति-बैंननितै, सक सैननितै सरसै सरसाई ॥
ऐसी भई दिन च्यारिकतै, बृजचदहूकी मतिकी दुरमाई।
देपत दूनी कलासी चढै सु बढै दिन द्वैजके चदकी नाई ॥
(नेहतरग, छ. स. ४४)

उपरोक्त चित्रण एक नवल-वधू के रूप का है किन्तु वर्णन की जितनी सात्विकता, उपमानो का जितना सयत प्रयोग और अभिव्यक्ति की जितनी तीव्रता इसमें है वह देव के उक्त वर्णन मे नही है। इस वर्णन को पढ कर नायिका के प्रति एक सात्विक सौन्दर्य-बोध जागृत होता है जब कि देव के वर्णन से एक प्रकार की ऐन्द्रिय आसक्ति उत्पन्न होती है।

श्री बुधसिंह के काव्य का आचार्य-पक्ष भी सशक्त है। इन्होने 'सर्वांग विवेचन' किया है। इनकी प्रतिपादन-शैली पद्यात्मक है और सस्कृत के आचार्य वाग्भट्ट की शैली के आधार पर है। काव्याग के शास्त्रीय विवेचन के लिये इन्होने दोहे का प्रयोग किया है और उदाहरण के लिये कवित्त, सवैया और छप्पय का। हिन्दी कवियो में तब इसी शैली का अधिक प्रचार था। केशव, तोष, मतिराम, भूषण, देव, भिखारीदास, पद्माकर, बेनीप्रवीन आदि ने भी इसी शैली का अनुसरण किया है।

अलकार-निरूपण मे श्री बुधसिंह की शैली जयदेव के चन्द्रालोक पर आधारित रही है। अलकार के शास्त्रीय विवेचन और उदाहरण को इन्होने एक ही छन्द मे समाविष्ट किया है। यथा एक ही मुक्तादाम छन्द मे उत्प्रेक्षा

---

[1] देव और उनकी कविता—डा० नगेन्द्र।

अलकार का विवेचन और उदाहरण देखिये—

इहै उतप्रेछ जु ससय माच,
गनी इक हेत इकै फल वाच।
न ती सम चाल धरैं गज धूरि,
मनौं तुव ओठ सुधा ससि पूरि।

नेहतरग, छ० स ४६०

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने इतिहास के रीतिकालीन प्रकरण मे कहा है, "आचार्यत्व के पद के अनुरूप कार्य करने मे रीतिकाल के कवियो मे पूर्णरूप से कोई भी समर्थ नही हुआ।" ऐसी धारणा अन्य विद्वानो की भी है और इसका कारण स्पष्ट है। हिन्दी के आचार्य कवियो को सस्कृत और प्राकृत-अपभ्रश की रीति-परम्परा परिपक्व रूप मे प्राप्त हुई थी। सस्कृत के आचार्यों ने इस क्षेत्र मे इतना कार्य कर दिया था कि इनके लिए कुछ शेष नही रहा और इसीलिए कतिपय अपवादो को छोड कर किसी भी हिन्दी कवि-आचार्य ने रीतिशास्त्रीय मौलिक उद्भावना नही की। इस काल के अधिकाश कवि राज्याश्रित थे और चमत्कार की सृष्टि कर तथा अपने आश्रयदाता की स्तुति-प्रशस्ति कर अर्थोपार्जन करना उनका कवि-धर्म हो गया था।

श्री बुधसिंह की स्थिति भिन्न रही है। वे स्वय नरेश थे और किसी दवाव, आश्रय और प्रशसा-प्राप्ति की इच्छा से इनके काव्य का निर्माण नही हुआ। इन्होने अपने यहाँ श्री कृष्णभट्ट और भोजमिश्र जैसे रीति-कवियो को सरक्षण दिया। अस्तु यह स्पष्ट है कि इनकी रचना-प्रवृत्ति स्वतन्त्र रही है। राजा जसवन्तसिंह की भाति इनकी दृष्टि भी शुद्ध साहित्यिक रही है और इनका नेहतरग ग्रथ एक विशुद्ध काव्य-शास्त्रीय ग्रथ है जिसमे इनकी रसवादिता और अलकारवादिता दोनो का उन्मुक्त प्रदर्शन हुआ है।

श्री बुधसिंह का नायक-नायिका-वर्णन पूर्ण रूप से परम्पराभुक्त है। इनके काव्य मे नायक-नायिका सम्वन्धी प्रचलित मान्यताओ का अन्य हिन्दी कवियो की भाति अनुसरण हुआ किन्तु कतिपय विभिन्नता को लेकर। नायिका-भेद की परम्परा वहुत पुरानी है और प्रमुखतया इसका सम्वन्ध भरतमुनि के नाट्य-शास्त्र से है। इस शास्त्र के अन्तर्गत नारी के अवस्था, प्रकृति और कामदशा के अनुसार कई भेद-प्रभेद किये गये हैं और वे ही नायिकाओ के नाम से अभिहित हुई है। उन्होने अपने इस शास्त्र मे पुरुषो के भी उनकी प्रकृति के अनुसार, प्रभेद किये है और वे नायक के नाम से सम्बोधित हुये है।

नायक-नायिका-भेद का विवेचन करने वाला एक और ग्रथ भी है और वह है वात्स्यायन का कामसूत्र। आचार्य रुद्रट ने इन दोनो ग्रथो के विवेचन का

समन्वित रूप अपने ग्रथ 'शृगार-तिलक' मे प्रस्तुत किया है और सस्कृत, प्राकृत, अपभ्रश के परवर्ती कवियो मे इसीका अधिक प्रचार हुआ।

श्री बुधसिह का नायक-नायिका-भेद भी रुद्रट की पद्धति का है। इसमे भरतमुनि की नायिकाओ का भी समावेश है तथा वात्स्यायन की नायिकाओ [पद्मिनी, हस्तिनी, चित्रिनी, शखिनी] का भी। केशव, मतिराम, देव आदि कवि-आचार्यों का प्रभाव तो इनके नायिका-भेद पर परिलक्षित होता ही है किन्तु इनके यहाँ आश्रित कवि श्री कृष्णभट्ट के नायक-नायिका-विवेचन का प्रभाव अधिक स्पष्ट और प्रगाढ है। श्री भट्ट ने इनके आदेश से ही वि० स० १७६६ मे 'शृगार-रस-माधुरी'[1] नामक रस-ग्रथ का निर्माण किया था। इसमे सभी रसो के साथ नायक-नायिका-भेद का विशद विवेचन है। नेहतरग मे उन्ही नायक-नायिकाओ का वर्णन है जो 'शृगार-रस-माधुरी' मे है। दर्शन, हावभाव, मान-मोचन, रस आदि अन्य काव्यागो के भी वे ही भेद बताये गये हैं जो श्री भट्ट ने अपनी इस कृति मे लिखे हैं। यह कृति क्योकि अभी अमुद्रित है और अप्र प्य भी है अत दोनो का ठीक तुलनात्मक अध्ययन कर के निश्चित निष्कर्ष तो नही दिये जा सकते किन्तु इतना स्पष्ट है कि श्री कृष्णभट्ट और श्री बुधसिहजी का निकट सान्निध्य रहा है, अतः प्रभाव स्वाभाविक है। यह भी सम्भव है कि श्री भट्ट ने बुधसिहजी को काव्यशास्त्रीय मार्ग-दर्शन दिया हो।

श्री बुधसिह की अनुभूति एकान्त शृगारिक रही है अतः काव्यागो के शास्त्रीय लक्षणो के विवेचन के पश्चात् उदाहरणस्वरूप अपने भावो की जो अभिव्यजना इन्होने की है वे आलम्बन व आश्रय (राधा और कृष्ण) की चेष्टाओ (अनुभावो) के बहुत मधुर चित्र प्रस्तुत करती है—एक उत्कठिता का रूपचित्र देखिये—

चद्रिकासी अबला चपलासी, लसै कमलासी सो सोभा लगीसी।
सारी हरि गहरै रगसौं, उभलीसी गुराई परै उमगीसी॥

---

[1] शृगार-रस-माधुरी का वर्ण्यविषय प्रमुख रूप से 'रस' है। यह सोलह 'स्वादो' मे विभक्त है। बुधसिह की 'नेहतरग' और इनकी 'शृगार-रस-माधुरी' के वर्ण्यविषय मे पर्याप्त साम्य प्रतीत होता है। नायक-नायिका भेद, रस, हावभाव, दर्शन, सखीवर्णन, मानमोचन आदि के, नेहतरग मे वे ही भेद-प्रभेद हैं जो शृगार-रस-माधुरी मे श्री कृष्णभट्ट द्वारा निरूपित हैं।
[आधार—हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास, षष्ठ भाग, खण्ड ३, अध्याय ४, पृ० स० ३६३-३६५]

लापी मनोरथकीसी मिली, रही आवनि लालके आषौं षरीसी।
चौंकी चकीसी, जकीसी बकीसी, टगी अटकीसी गढी है ठगीसी ॥

(नेहतरग, छ स ६१)

रूपबोध के साथ कवि का नायिका की मनोदशाओ का अध्ययन कितना सूक्ष्म है—यह उपरोक्त छन्द से प्रकट है। इसमे गतिशीलता का समावेश भी है। अब एक वर्ण्य-चित्र भी देखिये—

आजु छबि देत वलि राधे ब्रजचद साथ,
अंग अग उमगत जोबनकी जोरतें।
केसरिकै रग नित रग सोहै केतकीके,
कमल गुलाब कहा चपक निहोरतें।
अैसे लषि रीझिकै लसत रीझि कुंज-भौंन,
उप्पम न आवै कछु मेरे चित्त चोरतें।
चादिनी सुदेस मुष-चंदकों निहारि करि,
चाकरसे ह्वै चले चकोर चहूँ ओरतें।

(नेहतरग, छ स ७७)

केसर, केतकी और गुलाव के जड वर्णो के सहारे कवि ने राधा के रूप का प्राणवन्त चित्रण किया है। नवयौवन के वर्ण का सादृश्य केसर के वर्ण मे है—कमल, गुलाब और चपा पुष्पो के वर्णो की सादृश्यता भी नवयौवना के विभिन्न अगो मे प्रकट की जाती है। कवि ने इन रगो मे प्राण-प्रतिष्ठा कर राधा के लावण्य को अत्यन्त ही प्रभावोत्पादक ढग से मूर्तिमान किया है। श्री वुधसिंह और अन्य कवियो मे कला और आचार्यत्व की दृष्टि से यही सूक्ष्म अन्तर है कि इनके प्रयोगो और वर्णनो मे अधिक रूढता नही है, अस्पष्टता नही है। इनके सभी चित्र भावोद्रेकपूर्ण है।

काव्य रूप (छन्द-योजना)—

नेहतरग की छन्द-योजना पर जव दृष्टिपात करते हैं तो हमे सर्वत्र समकालीन परम्परा के ही दर्शन होते हैं। यह कृति एक 'सर्वाग-निरूपक लक्षण-काव्य' है और जिस प्रकार रीतिकाल मे रीति-ग्रथ लिखने वाले सभी कवि-आचार्यो ने मुक्तक का [दोहा, सवैया, कवित्तका] सहारा लिया था, श्री वुधसिंह ने भी इसी काव्य-रूप को अपनाया।

दोहा, सवैया, कवित्त, छप्पय आदि छन्द-शास्त्र की दृष्टि से 'मुक्तक' हैं। इनमें 'अन्यनिरपेक्षता' होती है। यह लघु रसात्मक खण्डदृश्यो के चित्रण मे

अधिक सक्षम होते हैं। इनमे चमत्कार की सृष्टि भी आसानी से हो जाती है।[1] रीतिकाल मे राजसभा में प्रशसा पाने, राजाओ की रसिकता को तुष्ट करने और थोडे मे रसोद्रेक और चमत्कार की सृष्टि के लिये 'मुक्तक' सर्वथा उपयुक्त थे।

नेहतरग क्योकि एक सर्वांग-निरूपक काव्य है, इसलिये इसमे दोहा, सवैया, कवित्त के अतिरिक्त छन्द और अलकार प्रकरण मे कवि ने अन्य छन्दो का प्रयोग भी अनिवार्य रूप से किया है जैसे कवित्त और सवैया के विभिन्न प्रकारो का। छप्पय, कडषा और मुत्तीयदाम छन्द का प्रयोग भी इस कृति मे हुआ है। काव्याग का शास्त्रीय विवेचन तो परम्परा के अनुसार इन्होने भी दोहे मे ही (अलकार-निरूपण के अतिरिक्त) किया है और फिर उदाहरण अपनी रुचि और सुविधा के अनुसार कवित्त, सवैया अथवा छप्पय मे दिया है।

श्री बुधसिह ने छन्द-निरूपण के प्रथम दोहे मे ही कहा है कि "नागपिंगल" छन्द-शास्त्र के छन्दो मे से कुछ का वर्णन मैं यहाँ कर रहा हूँ—

> बहुत छन्द कृत नाग के[2], पिंगल मत विसतारि।
> बिदत छन्द कछु कहत हौं, सो नीकैं उर धारि॥

इस दोहे से स्पष्ट है कि इन्होने नाग कृत छन्द-शास्त्र का अध्ययन कर उसी के मतानुसार कतिपय छन्दो के लक्षण दिये हैं। किन्तु यह अकेले इनकी ही विशेषता नही है। इस काल मे लिखने वाले सभी कवियो ने 'नागपिंगल' का ही सहारा लिया है। 'पिंगल' ही छन्द-शास्त्र के आदि-आचार्य हैं। जो स्थान व्याकरण-शास्त्र मे पाणिनि को प्राप्त है वही छन्द-शास्त्र में पिंगल को। परवर्ती जितने भी छन्द-शास्त्र के आचार्य हुये हैं, उनका मूलाधार यही ग्रथ है। हिन्दी रीति-कवियो ने यह परम्परा सीधे सस्कृत से न अपना कर प्राकृत-अपभ्रश से अपनाई है। स्वय बुधसिहजी का—दोहे के लक्षण बताने वाला छन्द

---

[1] हिन्दी साहित्य का इतिहास—आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (रीतिकाल)

[2] नाग—साहित्य मे इनका पूरा नाम नागराज मिलता है। इनका पौराणिक अथवा ऐतिहासिक अस्तित्व क्या रहा है—कुछ विदित नही हो पाया है। कहते हैं ये छन्दशास्त्र के आदि रचयिता हैं किन्तु यह अभी किसी साहित्यिक अनुसधान से सिद्ध नही हो पाया है। यो पिंगल मुनि छन्दशास्त्र के आदि रचयिता माने गये हैं। नाग (शेष) का एक पर्याय 'पिंगल' भी है अत सभव है नागराज व पिंगलमुनि एक ही हो। एक किंवदती के अनुसार शेषनाग ने ही छन्दशास्त्र की रचना की बताते हैं।

(डिंगल कोप—राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी, जोधपुर)

ऐसा प्रतीत होता है कि **प्राकृत पैंगलम्**[1] मे दिये गये लक्षणो का पिंगल अनुवाद मात्र है—

तेरह मत्ता पढम पअ, पुणु एआरह देइ ।
पुणु तेरह एआरहहि, दोहा लक्खड एह ॥
(प्रा० पैं०)

श्री वुधसिह ने इसी दोहे को इस प्रकार रूपान्तरित किया है—

तेरँ मत्ता प्रथम ही, पुनि अग्यारह जोइ ।
तेरँ ग्यारह बहुरि करि, दोहा लक्षन होइ ॥
(नेहतरग छ स ४२६)

कविता और छन्द का सवध अनिवार्य ही है। प्रसिद्ध दार्शनिक मिल ने एक जगह कहा है, "जव से मनुष्य मनुष्य है तभी से उसके सभी गभीर और सम्बद्ध भावो की अपने आपको लययुक्त भाषा मे व्यक्त करने की प्रवृत्ति रही है। भाव जितने ही गभीर हुये हैं लय उतनी ही विशिष्ट और निश्चित हो गई है।" उपरोक्त कथन मे एक मनोवैज्ञानिक सत्य का उद्‌घाटन हुआ है। कविता और छन्द का वास्तव मे एक नैसर्गिक सम्बन्ध है और शायद इसीलिये प्रत्येक कवि ने छन्दोबद्ध कविता की है। आधुनिक युग की नई कविता का कवि भी इसका अपवाद नही है—उसमे भी एक गति और लय-योजना होती है। रीति-काल के कवियो ने जिन छन्दो का आलम्बन लिया उनमे लयात्मकता और सगीत अधिक है किन्तु जो कवि वर्णों और शब्दो के चयन मे सतर्क नही रहे उनमे माधुर्य और सगीतात्मकता का अभाव रहा है। उपरोक्त छन्दो में [कवित्त, सवैया मे] ध्वन्यात्मकता का प्राधान्य रहा है और जिन शिल्पियो ने ऐसा नही किया उनके छन्द रूखे काव्य—शरीर मात्र बन कर रेह गये हैं।

श्री वुधसिह मे ऐसी रूक्षता परिलक्षित नही होती। उनके शब्दो में ध्वन्यात्मकता है—वे सगीत की कोमल और श्रुतिसुखद तरगे उठाने में सफल हैं। शब्दालकारो और अनुप्रासो का प्रयोग उनके छन्दो मे नाद-सौन्दर्य की सृष्टि करता है। एक उदाहरण देखिये—

गाजकै सज्जल कज्जलसे, घन छूटि मदज्जलसे झर जागी।
मोरके मोर करै चहु ओर, मो चचला ज्यो चलि पाग उनागी ॥
(नेहतरग, छ स ४००)

---

[1] प्राकृत पैंगलम्—यह प्राकृत और अपभ्रश भाषाओं के छन्दशास्त्र का ग्रन्थ है। कहते हैं इसकी रचना कई विद्वानो के योग से हुई। यह १४ वीं० श० ई० मे रचा गया था। इस पुस्तक का प्रभाव हिन्दी-छन्दशास्त्र पर पर्याप्त रूप मे दृष्टिगोचर होता है।
(साहित्य कोश)

ऋतु-वर्णन—

रीतिकाल मे ऋतु-वर्णन की दो परम्पराये रही हैं—एक निरपेक्ष-ऋतुवर्णन और दूसरी सापेक्ष-ऋतुवर्णन। निरपेक्ष-ऋतुवर्णन मे नायक नायिका का आलबन ग्रहण नही किया जाता। इसमे सहज भावोद्दीपन होता है, सुन्दर अभिव्यजना के सहारे ऋतु का एक सश्लिष्ट चित्र प्रस्तुत किया जाता है। सस्कृत के कुछ कवियो के काव्यो मे ऐसे चित्र उपलब्ध होते हैं। हिन्दी के कवियो मे सेनापति ऐसे हैं जिन्होने ऋतुओ के निरपेक्ष सश्लिष्ट चित्र अकित किये हैं। पद्माकर मे भी कही-कही पर इसके दर्शन होते हैं। उदाहरण के लिए उनका बसन्त-वर्णन देखिए—

कूलन मे, केलि मे, कछारन मे, कुजन मे,
क्यारिन मे कलिन कलीन किलकत है।
कहै पद्माकर पराग हू मे, पौन हू मे,
पानन मे, पिकन, पलासन पगत है।
द्वार मे, दिसान मे, दुनी मे, देस-देसन मे,
देखो द्वीप द्वीपन मे दीपत दिगत है।
बीथिन मे, व्रज मे, नवेलिन मे, बेलिन मे,
वनन मे, बागन मे, बगरयौ बसत है।।

उपरोक्त वर्णन मे बसत के समस्त अन्तर और बाह्य का चित्र सहृदयो के नेत्रो मे अकित हो जाता है। उसके रूप, रस, गध सभी प्रत्यक्ष हो जाते है।

सापेक्ष ऋतुवर्णन मे ऐसा नही होता। ऋतुओ के स्वतन्त्र व्यक्तित्व को नायक-नायिकाओ की सयोगावस्था व वियोगावस्था से सम्बद्ध कर दिया जाता है। पावस ऋतु का नायिका के विरह की पृष्ठभूमि मे सापेक्ष वर्णन इस प्रकार होता है—

श्रीपति सुकवि कहै घेरि घोर घहराहिं,
तकत अतन तन ताप मे तए तए।
लाल विनु कैसे लाज चादर रहैगी आज,
कादर करत मोहि वादर नए नए।

श्री बुधसिंह ने नेहतरग मे ऋतुवर्णन की दोनो परम्पराओ को अपनाया है। प्रसग-सापेक्षता और निरपेक्षता दोनो के दर्शन इनके ऋतुवर्णन में होते हैं—

फूली लता नव पल्लवकी, सो जटा पुलि केसरि ज्यौ छवि छायो।
गुजन भौंरनकी चहुधा, कुसमाद पलासनके नप लायो।।
सीतल-मद-सुगध समीर, तिही भय त्रासन आगम धायो।
यौं वृजपै वृजराज विना, रितुराज मनो मृगराज ह्वै आयो।।
(नेहतरग, छ सं ४१६)

यह बसत-ऋतु का सापेक्ष चित्रण है। कृष्ण की अनुपस्थिति मे विरही व्रज के लिए वसत मृगराज के समान कष्टदायी है। यह सागरूपक भी है।

अब बुधसिहजी के निरपेक्ष-ऋतुवर्णन का चित्र देखिये—

छूटि झरै धुरवा गति ज्यौ, गगधार हजारनकी सरपा है।
वादर नाहिं विभूति लसै, नाद कोकिल कोजतिकी करषा है।
चचला मोहै जटा पुन्जिकैं. भाल-चदसो चन्द्रिकाकी निरपा है।
उप्पमताई सौं यौ परसै, दरसै महादेव किधौ वरपा है॥

(नेहतरग, छ स ४२०)

वर्पा ऋतु की जटाधारी महादेव से तुलना कर कवि ने सागरूपक प्रस्तुत किया है किन्तु इसमे वियोग अथवा सयोग की नितान्त निरपेक्षता निहित है।

भाषा—

मैं ऊपर कह आया हूँ कि बुधसिहजी ने अपनी काव्य-रचना का माध्यम पिंगल को बनाया था। किन्तु नेहतरग की पिंगल और राजस्थान मे इसी काल मे रचित अन्य काव्यो की पिंगल मे वहुत वडा अन्तर है। राजस्थानी मिश्रित व्रजभापा को पिंगल नाम दिया गया है। यदि नेहतरग की भापा का सूक्ष्म अध्ययन करे तो इसके रूप और प्रकृति मे हमे राजस्थान की तत्कालीन साहित्यिक भापा डिंगल अथवा राजस्थानी की छाप अधिक मिलती है। इसके सज्ञा-शब्दो के अतिरिक्त बहुत से विशेपण, कारक, सर्वनाम और क्रियारूप भी डिंगल के ही हैं। निम्नाकित शब्द जो नेहतरग मे प्रयुक्त हुये हैं, स्पष्ट रूप से राजस्थानी के हैं—

वलाय, तेरू, पखेरू, सापै, अगाऊलै, वेर, उमाहि, वारपार, सगलौ, सगरी, उग्यौ, रढी अपूठैं, पसरी, सरत, सरीपी, नौज आदि।

इन शब्दो (सज्ञा, विशेपण, क्रिया) का नेहतरग मे प्रचुर प्रयोग हुआ हैं और व्रजभाषा सस्कृत के तत्सम तथा अन्य भाषाओ के शब्दो का प्रयोग भी राजस्थानी की प्रकृति मे ढाल कर ही कवि ने किया है। अत मेरा अपना मत यह हें कि यदि हम 'नेहतरग' की भापा को शुद्ध राजस्थानी नही तो कम से कम शुद्ध पिगल भी नही कह सकते। इसे पिंगल की एक शैली विशेप कहा जाना चाहिए जिसमे राजस्थानी का रूप मुखर हुआ हैं। भापा-विवाद के पारगत योद्धा 'इस' और 'उस' भापा को 'यह' और 'वह' भापा सिद्ध करने की आग्रहपूर्ण चतुरता दिखाया करते हैं। राजस्थानी के अनेक रासो-ग्रथो की भापा को लेकर यह विवाद आज भी है। मीरा के काव्य की भापा पर भी सभी विद्वान आज एकमत नही हैं। मेरा अभिप्राय नेहतरग की भाषा को लेकर यह

विवाद प्रारम्भ करने का नही है। जो मेरा अल्प ज्ञान बताता है उसी के आधार पर मैंने यह मत प्रकट किया है।

नेहतरग की भापा मे सस्कृत के तत्सम, प्राकृत और अपभ्रश तथा उर्दू-फारसी के शब्दो का भी प्रयोग हुआ है। यह भी रीतिकाल के कवियो की सामान्य भापा-प्रवृत्ति रही है। देव, पद्माकर, मतिराम, भिखारीदास, रसखान आदि मे यह प्रवृत्ति स्पप्ट रूप से दिखाई देती है। बुधसिहजी इसके अपवाद कैसे रहते ?

बुधसिहजी ने प्रचलित मुहावरो का प्रयोग भी वहुलता से किया है। मुहावरो के उपयुक्त प्रयोग से अभिव्यजना मे तीव्रता आ जाती है। किन्तु जहा मुहावरो का अति प्रयोग कवि का साध्य हो जाता है वहा भावव्यजना के स्थान पर चमत्कार की अधिकता हो जाती है। बुधसिहजी ने ऐसा नही किया—मुहावरो का प्रयोग इन्होने वहुत सयत होकर केवल भावाभिव्यजना मे सौन्दर्य और तीव्रता लाने के लिए किया है। नीचे का उदाहरण मेरे कथन की पुष्टि करेगा—

फूलि है धौं घर आपन के, लगि सोच सकोच वढे बन ये हैं।
क्यौ वृजमैं वसिवौ सजनी, वृजचद तौ चौथिकौ चद भये हैं।।

(नेहतरग, छ स ३०)

यहाँ 'चौथिकौ चद' मे कोई चमत्कार का भाव नही है। नायिका की वियोगजन्य विवशता मे एक प्रकार की तीव्रता पैदा की गई है।

इसी प्रकार 'बैर परे हैं, जाल सफरी ज्यौं, आबिन लागि, हाथ बिकी है, पखेरू लौ फिरत हैं, काच की चूरि लौ, पीछै परे कछु हाथ न आवै' आदि मुहावरो का बहुत स्वाभाविक रूप मे प्रयोग हुआ है—प्रयत्नजन्य नही।

नेहतरग की भाषा मे अलकरण (Ornamentation) का प्राचुर्य है। कोई भी ऐसा छन्द आपको नही मिलेगा जिसमे किसी न किसी अलकार की छटा नही दिखाई गई हो। शब्दालकार और अनुप्रास का स्वाभाविक प्रयोग भाषा और भावो को अलकृत करता है। नेहतरग मे वृत्यनुप्रास, छेकानुप्रास और अन्त्यानुप्रास का बहुलता से प्रयोग हुआ है।

भाषा-सौष्ठव का दूसरा अग है—अर्थ-ध्वनन। शास्त्रीय दृष्टि से यह भी एक प्रकार से अनुप्रास के अन्तर्गत ही है। अर्थ-ध्वनन से तात्पर्य है—व्यजनो की मैत्री और अनुकरणमूलक शब्द। जब ऐसे वर्णों का प्रयोग एक साथ होता है तो उनमे एक प्रकार की ध्वनि उठती है और वह एक विशेष अर्थ को अभिव्यक्त करती है। जैसे—'तनक तनक तामे झनक चुरीन की', 'तनक तनक' मे स्वत.

ही चूडियो की झकार अभिव्यक्त हो जाती है। यह ध्वनिप्रधान शब्द है। नेह-तरग मे कवि ने ऐसे ध्वनि-प्रधान वर्णो और शब्दो का प्रयोग कर अर्थ-ध्वनन का सौन्दर्य पैदा किया है—

हा वलि हौं इन वात निहारी

नेहतरग की भाषा मे कान्ति-गुण (Polish) का भी अभाव नही है। शब्द-गत औज्ज्वल्य और मसृणता के दर्शन सर्वत्र होते हैं। न तो कही कोई भर्ती का शब्द है और न कोई निरर्थक। सम्पूर्ण शब्द-योजना मे एक प्रकार की कसावट है और इससे भाव-व्यजना मे स्वत. ही सौन्दर्य आ गया है।

परवर्ती कवियो का प्रभाव—

श्री बुधसिहजी सर्वथा मौलिक कवि-आचार्य हैं ऐसा नही कहा जा सकता। रीतिकाल के अन्य कवि-आचार्यो की भाति इन्होने भी अपनी समकालीन प्रवृत्तियो और परम्पराओ से प्रभावित होकर काव्य-रचना की है। सस्कृत और प्राकृत-अपभ्रंश की जो रीति-रचना हिन्दी मे आई और जिसका अनुकरण कतिपय अपवादो के साथ जिस प्रकार केशव, बिहारी, देव, मतिराम आदि ने किया उसी प्रकार श्री बुधसिहजी ने भी किया, यह सत्य है। उपमाओ के रूढ प्रयोग, रीतिकाल का काव्य-रूप, प्रतिपाद्य और जीवन-दर्शन इनमे भी ज्यो के त्यो मिलते हैं। भेद है तो इतना ही कि इनकी लेखनी रूप-वर्णन मे उच्छृंखल नही रही। इनमे शृगारिक भोगपरता का अपेक्षाकृत अभाव है, सवेगात्मक रूप-वर्णन की ओर इनकी आसक्ति कम है। राधा और कृष्ण को अपने नायक और नायिका मान कर इन्होने सात्विकता का निर्वाह किया। इसका कारण यही रहा कि ये नरेश थे, चमत्कार सृष्टि और शरीर-सौन्दर्य का अनुदात्त वर्णन कर उन्हे न तो किसी से स्वर्णमुद्रा पुरस्कार मे लेनी थी और न प्रशसा प्राप्त करनी थी। काव्यानुरागियो के लिये इन्होने स्वान्त सुखाय ही सब कुछ लिखा।

इनके वर्ण्य-विषय और अभिव्यजना पर समीक्षात्मक दृष्टिपात करने पर यह स्पष्ट है कि देव, बिहारी, मतिराम, रसखान, श्री कृष्णभट्ट आदि का उन पर स्पष्ट प्रभाव है। भावसाम्य के साथ कही कही पर तो शब्द-समूह और पंक्तियाँ भी मिल गई हैं। बिहारी के वसन्त-वर्णन पर रचित दोहे और बुधसिहजी के दोहे की तुलना कीजिये—

छकि रसाल सौरभ सने, मधुर माधवी गध।
ठौर ठौर झौंरत झंपत, भौर भौर मधु अध॥

(बिहारी)

करत गुज मिलि पुज अति, लपटे लेत सुगध।
ठोर ठोर झौरत झपत, भौंर-झौर मद अध।।
(नेहतरग, छं स ४१५)

यह प्रभाव-दोप अकेले श्री बुधसिहजी मे ही नही है। यदि हम अन्य समकालीन लेखको और कवियो का तुलनात्मक अध्ययन करे तो इसका प्रभाव सर्वत्र परिलक्षित होगा। बिहारी की सतसई पर अमरुशतक की स्पष्ट छाया है। देव, मतिराम, सेनापति आदि भी इस दोष से नही बचे हैं। फिर इसे दोष भी क्यो कहा जाय? यह तो युग-प्रवृत्तियो की स्वाभाविक प्रतिक्रिया मात्र है। अत हमे श्री बुधसिहजी पर पडे इस प्रभाव को इसी स्वस्थ दृष्टि से लेना है।

पिंगल रीति-काव्य मे स्थान—

नेहतरग और श्री बुधसिह की सक्षेप मे सर्वांग काव्य-समीक्षा करने के पश्चात् अव हमे यह देखना है कि पिंगल-साहित्य मे नेहतरग का क्या स्थान है और राजस्थान के पिंगल रीतिकाव्य मे श्री बुधसिहजी का क्या योग है। रीतिकाल मे, राजस्थान मे पिंगल मे जो रीति-ग्रथ लिखे गये उनमे से अधिकाश एकाग-निरूपण शैली के हैं अर्थात् या तो वे रसपरक हैं या छन्दशास्त्र या अलकारो पर। कुछ कृतियाँ ऐसी भी हैं जो सर्वांग-निरूपण शैली को आधार मान कर लिखी गई हैं। महाराजा जसवन्तसिहजी रचित 'भाषाभूषण' ऐसी ही एक प्रतिष्ठित कृति है। नेहतरग का स्थान भी पिंगल रीतिग्रथो मे वही होना चाहिये जो 'भाषा भूषण' का है। डॉ० मोतीलाल मेनारिया ने नेहतरग के विषय मे लिखा है, "नेहतरग हिन्दी-साहित्य की एक अनमोल निधि है—साहित्य की दृष्टि से यह एक निष्कलक रचना है। भाषा, भाव, काव्य-सौष्ठव सभी का इसमे सुन्दर सयोग हुआ है"।[1] इसी प्रकार डॉ० सरनामसिह शर्मा 'अरुण' ने कहा है कि श्री बुधसिह पिंगल साहित्य के उच्च कोटि के कवि-आचार्य थे। उनकी नेहतरग का पिगल के रीति-ग्रथो मे विशिष्ट स्थान है।[2] अस्तु हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि चाहे श्री बुधसिहजी ने परिमाण की दृष्टि से बहुत थोडा लिखा हो किन्तु उनकी यह एक रचना ही रीति-साहित्य के क्षेत्र मे उन्हे विशिष्ट स्थान दिलाने के लिये पर्याप्त है।

उपसहार

राजस्थान के साहित्य और साहित्यकारो की उपेक्षा को लेकर इस निवन्ध

---

[1] राजस्थान का पिंगल साहित्य—डा० मेनारिया, पृष्ठ सं० १२३।
[2] राजस्थानी साहित्य की प्रगति और परम्परा—डा० अरुण।

के प्रारम्भ मे मैंने दु ख प्रकट किया है। मैं इसकी पुनरावृत्ति करते हुये लिखना चाहूँगा कि राजस्थान को मनोभूमि वहुत ही उर्वर रही है—इसकी साहित्यिक सम्पदा अमूल्य है। यहाँ के सग्रहालयो मे, राजघरानो मे, प्राचीन ऐतिहासिक केन्द्रो मे तथा गाँवो की झोपडियो मे हस्तलिखित ग्रन्थो के रूप मे अनन्त ज्ञान-राशि छिपी हुई है। उनका सर्वेक्षण, गवेषणा और मूल्याकन अव द्रुत गति से होने लगे हैं। "राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान" इस क्षेत्र मे अत्यन्त श्लाघनीय कार्य कर रहा है। शार्दूल राजस्थानी रिसर्च इस्टिट्यूट, वीकानेर, राजस्थानी शोध सस्थान, जोधपुर और राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर की सेवाये भी कम प्रशसनीय नही हैं। किन्तु इस क्षेत्र मे जितना कार्य हो जाना चाहिये था वह नही हो पाया। हिन्दी क्षेत्र के विद्वानो की उत्तरदायिता भी इस विपय मे कम नही हैं। आज सवसे बडी आवश्यकता है—हमारे दृष्टिकोण की उदारता। भापायी और प्रादेशिक भावनाओ से ऊपर उठ कर विद्वानो को उदार और निरपेक्ष दृष्टिकोण अपनाना चाहिये, देश के साहित्यिक और भावनात्मक एकीकरण के लिये आज हमारी यह राष्ट्रीय आवश्यकता है। विद्वान इसे मेरा एक नम्र निवेदन मात्र समझे।

इस पुस्तक के सम्पादन और इसकी भूमिका लिखने मे मैंने वहुत से विद्वानो की कृतियो का उपयोग किया है। मैं उनके लेखको और प्रकाशको के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ।

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान के सम्मान्य सचालक श्रद्धेय मुनिवर पद्मश्री जिनविजयजी का मैं कृतज्ञ हू कि जिन्होने इस पुस्तक का प्रकाशन प्रतिष्ठान से करना स्वीकार किया। इस पुस्तक के सम्पादन मे, सामग्री के प्रूफ सशोधन मे महत्त्वपूर्ण मार्ग-निर्देशन देकर प्रतिष्ठान के उप सचालक श्री गोपालनारायणजी वहुरा ने जो रुचिपूर्वक योग दिया है तदर्थ मैं चिरऋणी रहूँगा। प्रतिष्ठान के प्रवर शोध सहायक श्री पुरुषोत्तमजो मेनारिया को भी मैं धन्यवाद देता हूँ कि पुस्तक के प्रकाशन मे इनका आद्योपान्त सहयोग रहा है।

१० जुलाई १९६१,
हिन्दी विभाग,
जसवन्त कॉलेज,
जोधपुर।

रामप्रसाद दाधीच

बूंदीनरेश हाडा रावराजा बुधसिहजी कृत

नेहतरंग

अथ श्रीनेहतरग

॥र्द०॥ ओम् नम ॥श्रीगणेशाय नम ॥ श्री सरस्वत्यै नम ॥ श्रीगुरुभ्ये नम ॥

दोहा – शुडादड[1] उदड अति, चदकला षुलि साथ।
बिघनहरन[2] मंगलकरन, जँ[3] गजमुष गननाथ[4] ॥ १

छप्पय – मदन - मोदकर - बदन[5] सदन बेताल[6] - जाल - व्रत।
भक्त - भीत - भजन अनेक जिन असुर - बस - हृत[7]।
चन्द्रहास कर चड चडमुडादि - रुहिरमय।
अनलझालजुत[8] भाल लाललोचन बिसाल[9] जय।
जय जय अचित[10] गुन-गन-अगम, आतमसुख[11] चैतन्यमय।
जय दुरतिहरण[12] दुर्गा जननि, राजति[13] नवरसरूपमय॥ २

कवित्त – एक वोर[14] मगा गगा सोहै[15] एक वोर आधै[16],
छूटि रहे केस आधैं छूटी जटा भेसकौ[17]।
आधै दुपटा[18] है[19] लक सोहत बघबर सौ,
सोहै ससि भाल नव बेस केल बेसकौ॥
आषिन तरग भग भ्रिकुटी अनग बर,
दैंन कौ उमग राजै[20] भसम उजेसकौ।
भूषन फनेस सुर सेवत सुरेस वेस,
मेरी वोर की हमेस आदेस भूतेसकौ[21] ॥ ३

---

१   १ ख. सुडादड। २ ख विघनहरन। ग विघनहरन। ३ ख जय। ४ ख गणनाथ।

२   ५ ख वदन। ६ ख वेताल। ७ ख हत। ८ ख अनलजालव्रत। ग अनलजालव्रत
९ ख विशाल। १० ख जय। ग अनत। ११ ख ग आतम।
१२ ख ग हरन। १३ ख राजत।

३   १४ ख ओर। १५ ग सोहे। १६ ख आधे। १७ ख भेसको। १८ ख. दुपटा।
१९ ख हे। २० ख. राजें। २१ ख भूतेशकों।

दोहा – रूप-सुधा-रस सरससौ, वरन[1] हस मिलि सग।
नीरज नवरस रग करि, नेहतरग तरग ॥ ४

रस विभाव[2] अनुभाव अरु, सव सचारी भाव।
भाषा बरनि बताइहौ, ज्यो दरपन दरसाव ॥ ५

जामै[3] स्थायी-भाव रति, सो वरन्यो शृगार।
यक सजोग वियोग यक, ताके[4] द्वय[5] परकार[6] ॥ ६

अथ श्रीराधिकाकौ सजोग-शृंगार यथा

कवित्त – प्रीतिके उपायनसौ भाति भाति भायनसौ,
सहज सुभायनके भायनकौ लै रहे[7]।
निपट[8] प्रगट उघटत न घटत नट,
सु लटं सुघट उछटनि छवि छै रहे॥
वृ दावनचदके दरस पर वारवार,
जीतिबेके जत्रनसे[9] जतन जितै[10] रहे।
खजन पटतर न लागत निरतर,
सो नैना पट - अतर धनतरसे ह्वै रहे ॥ ७

अथ श्रीराधिकाकौ बियोग-शृंगार

[यथा – ऊधौ क्यो[11] न कहो जांइ[12] स्याम सुखदाइकसो,
वृजमे[13] विरचि एक विधि नइ वाधी है।
हेरि काम गोपिनके दृग-मृग पहिचानि,
सावन बदूक कध पावसकै काधी है॥
गाजते करे[14] अवाज जाम लगी[15] लगाये वीज,
ससति सभारिके अचूक ताकि नाधी है।

---

४ १ ख. बदन।
५ २ ख. विभाव।
६ ३ ख जामें। ४ ग वाके। ५ ख. दोय। ६ ख प्रकार।
७ ७ ख रहें। ८ ख निघट। ९ ख. जत्र। १० ख जते।
८ ११ ख. ग क्यौं। १२ ख जाई। ग जाय। १३ ख बृजमें। ग ब्रजमें। १४ ग करें। १५ जामे लगी। ग जामगी।

परी अधर परी अनपरी ए न होहि बूद,
गोरी एक मारी एक छोडी एक साधी[1] है ॥ ८

अथ नायकवर्णन

दोहा – सुन्दर सकल कलानिपुन, अति प्रवीन सुख साज ।
प्रीतवन्त गुनवंत अति, सो नायक ब्रजराज ॥ ९
च्यारि भेद ताके सुनहु, अनकूल हियको[2] देखि ।
दक्षिन दुतिये त्रतिय सठ, धृष्ठ सु चोथो[3] लेखि ॥ १०

अथ अनुकूल लछिन

हित करिके[4] नितप्रति रहै, निज नारीकै सूल ।
अनित चित चचल नही, ताहि कहत अनुकूल ॥ ११

कवित्त – चन्द्रको[5] चकोर ज्यौ दिवाकरको[6] चक्रवाक,
जैसे मघवांनको कलापी वरजोरी है ।
जोगी जोग-ध्यानको जुराफा ज्यो[7] जुरानकों,
महोदधिके थानको मराल मति मोरी है ।
ए री बलि चदमुखी तेरे मुखचद पर,
वृदावनचदकी लगनि यो[8] निहोरी है ।
चाय[9] वरजोरी यन चातकन[10] लोचननि,
चातकते[11] चोरी कैधो चातकन चोरी[12] है ॥ १२]*

अथ दक्षिन लक्षन

दोहा – पहलौ[13] सौहित[14] सहज उर, अति विचित्र समप्रीति ।
मन चालै तन बसि रहै, इह दक्षनकी रीति ॥ १३

---

८ १ ग. साधी ।
१० २ ग. हियकु । ३ ग चोथौ ।
११ ४ ख ग करिकै ।
१२ ५ ग चदकौं । ६ ग कौं । ७ ख ग ज्यौं ।
८ ग यौं । ९ ग. चापि । १० ग घनवातक ।
११ ग तें । १२ ग चौरी ।
*टि०– वडे कोष्ठकमे दिये गये छन्द मेरे पास उपलव्ध प्रतिमे नही थे । ये छन्द श्रद्धेय अगरचदजी नाहटा, वीकानेरसे प्राप्त प्रतिमेसे लिये गये हैं । (सं०)
१३ १३ ख ग पहिलो । १४. ख. ग. सोहित ।

सवैया – आज लसै ब्रजनारी सबै, जमना तटपै जुरि आई अलेपैं ।
ता समै आप कढे नदनदन, सोहै चढे उपमान विसेपैं ।।
रीझि रही अपनै अपनै मन, देपि सबै प्रगटे ग्यो असेपै ।
कोरि चकोरनकी चित चाह, रही जैसे चौदहै[1] चदके देपै ।। १४

अथ सठलक्षन

दोहा – मीठी बानी[2] मुपि लये, हिये कपट पहचानि[3] ।
दूषनसौ दूरि न रहै, सो सठनायक जानि ।। १५

कवित्त – ऐसी यह[4] रीतिसौ लुभानै[5] बलि वारबार,
कहीहू न[6] जात सुनी बात न जे चलिया ।
रावरै तौ रीझि इन बातनकी परी आय,
चद चाहि चदमुपी मिलिया न गलिया ।
भीजी अनुराग उन अगनकै राग अग,
अग प्रति राग जाकै रगरीझ छलियां ।
चन्द्रिकान चलिया चकोरूकी[7] अवलिया[8] वे[9],
चौकीदार[10] भई है चबेलिनकी[11] कलिया ।। १६

अथ धृष्टलक्षन

दोहा – गारि-मारकी त्रास सब, नही अग लवलेस ।
पेस मिलै[12] सब जाइगा, लषौ धृष्टि इहि भेस ।। १७

यथा – आजु कहौ[13] फिरि काल्हि कहौ, परसौकौ, कहौ बिन बातन जीहैं ।
केते षिजै बरजै लरजै, तरजै न तऊ अरजै समही है[14] ।
लाज न लेस कुनाज कलेस न, ऐसी हमेस न रीति नई है ।
प्रीति सरीति[15] कितेकनसौ[16], पै लिये फिरै चाहि चकोरनकी है ।।१८

---

१४ १ ख चोदहं ।

१५ २ ख वानी । ग बानी । ३ ख ग पहिचानि ।

१६ ४ ख यहै । ग यह । ५ ख लुभाने । ६ ख रहीहून । ७ ख चकोरोकी । ८ ख अवलीया । ९ ख चे । १० ख चोकीवार । ११ ख चबेलीनिकी ।

१७ १२ ख मिले । १३ ख कहो । १४ ख. तन ऊपर जैसे मही है । १५ ख. सी रीति । १६ ख कितेकनिसौं ।

अथ पद्मनादिक नायकाबर्नन

दोहा – यकु तौ[1] पद्मनि कहत है, दुतिय[2] चित्रनी होइ ।
त्रितिय[3] हस्तनी चतुर्थी, सषनि जानहु सोइ ।। १९

अथ पद्मनीलक्षन

दोहा – कनकबरन कौधनि[4] हसनि, चितवनि चितकी वोर[5] ।
पद्मनि सलज सरूप त्रिय, सौरभ 'परत झकोर' ।। २०

यथा – आजु मै देषी है[6] गोपसुता मुष, देषैतें चन्द्रमा फीकौ ह्वै[7] जोतो ।
गोरे गुलाबकी आवहूतें, गहराई गुराईके सग समोतो ।।
सिधुसुता सम ताके समान, सो वा बलिकौ रग और अन्होतो ।
होती जो कुदनके अग बास जौ, जौ कहु[8] केतकी काँटौ न होतो ।।२१

अथ चित्रनीलक्षन

दोहा – बात[9] गात मति जासमै, अति विचित्र गति होय ।
तासौ कहियत चित्रनी, परम पुराने लोय ।। २२

यथा – आजु मुषचद[10] पर रोचन-रचित भाल ,
ऐंही ब्रजचदके बिकावनि सिताबकी ।
छाजति छबीली छबि बरनी न जात मोपै[11] ,
हरनी हितूजनके हियके हिताबकी ।
रतिकी न रभाकी न सची उरबसीकी न ,
वारि-वारि डारियत उपमा किताबकी ।
गालिब गुलाबकी न पकजके आबकी न ,
रही आफताबकी न ताब महताबकी ।। २३

अथ हस्तनीलक्षन

दोहा – चित चचल गति मद सब, भारे अग बषानि ।
ताहि हस्तनी कहत है, चतुर चित्त पहचानि ।। २४

---

१९ १ ख इकतौं । ग यकुतो । २ ख दुतीय । ३ ख तत्रतिय ।
२० ४ ख. कोधरि । ५ ख. चितकी चोर ।
२१. ६ ग हैं । ७ ग है । ८ ग. कहुं ।
२२. ९ ख वात ।
२३ १० ख मुषचद्र । ११ ख मोपें ।

यथा — सरदके चन्द्रमासौ राजत बदन - चद ,
छूटे केसपास भारे लंक बिसतारे[1] है।
कंचनके कुभ जेसे[2] उनत[3] उरोज अति ,
भारे भारे अग गहि भायकै उतारे है।
चितवनि हसनि चलनि चातुरीसौ चारु ,
अैसी उपमानि[4] निरधार न बिचारे है[5]।
मान मद[6] परवे गुमान गति परवे सो ,
तेरी गति गरवे गयद लषि हारे है ॥ २५

अथ सषिनीलक्षन

दोहा — कोप-कपट-परवीन-तन, तीछन लोम अपार।
अति करूप सो सषिनी, कबिजन कहत विचार ॥ २६

यथा — भूरे त्यो[7] केस कुबासकी[8] भूरिसौ[9], लोम भरे तन सूळ सरे है।
भूलि हसै न रसै रससौ[10], लषि लागत है[11] दुप कासौ भरे है ॥
जा तनके लगे पौन[12]कौ पाइ, सिराइकै जे छितिपै बितरे है।
चाहि भुलाइ[13] झुकै दुषहाल, बिहाल ह्वै कै घनै भौर परे[14] है ॥ २७

इति श्रीनेहतरगे रावराजा श्रीबुद्धसिंह सुरचते अनुकूलादि नाइक-
पद्मनादिक नाइका निरूपण नाम प्रथमो तरग।

*

अथ दरसन

दोहा — अब दरसन सुनि च्यार बिधि[15], इक साक्षात सुरूप[16]।
दुतिय श्रवन त्रितिय[17] सुपन, चौथौ[18] चित्र अनूप ॥ २८

अथ साष्यातदरसनलक्षन

पिव प्यारी प्यारी पिया, देषै[19] अपनै नैन[20]।
सो दरसन साष्यात कहि, तन मन सब सुख दैन[21] ॥ २९

---

२५ १ ख विसतारे। २ ख अैसे। ३ ख उन्नत। ४ ख उपमान। ५ ख विचारे हैं।
६ ख मदन।
२७ ७ ख ग भ्हरेत्यौं। ८ ख. कुवासकी। ९ ख. भूरिसो। १० ग रससौं।
११ ख है। १२ ग. पौन। १३ ख भुलाई। ग लुभाई हुकै। १४ ग परै।
२८ १५ ख विधि। १६ ख ग सरूप। १७ ख त्रतिय। १८ ख. चोथो।
२९ १९ ख ग देखे। २० ख नेन। २१ ख. देन।

अथ श्रीराधाजूको साक्षातदरसन

आजु लषे ह्व ते घ्या मगकौ, वह ता छिन तें[1] छकि नैना रहे है।
पार परौसी[2] सवै[3] घरके कहिबे, सुनबे सबहीकौ[4] कहे[5] है॥
फूलि है धौ घर आपनके[6] लगि[7], सोच सकोच बढे बन ये है।
क्यौ[8] बृजमै वसिबौ[9] सजनी, बृजचद तौ चौथिकौ[10] चद भये है॥ ३०

अथ श्रीकृस्नको साक्षातदरसन

यथा – आजु लषी वह तीर कालिंद्रीकै[11], चद्रिका रगसौ अगभरी सी।
छूटी लटै[12] उघटै[13] मुषपै[14], न घटै[15] न मनौजकै[16] मत्रफुरी सी॥
वोढनी लाल हर्यो लहगा, सु करी मानौ चद्रमा चीरि धरी सी।
रूपकी लूटि पं जूटि परी, सु परी असमानसौ[17] छूटि परी सी॥३१

अथ श्रवनदरसन लक्षन

दोहा – सुनत अग प्रति अगकी, दरसै[18] गति[19] मति आइ।
श्रवनदरस ताकौ[20] कहै, कविता[21] कबि ता गाइ[22]॥ ३२

अथ श्रीराधिकाको श्रवनदरसन

यथा – जा दिनतै[23] बलि रावरी बात, कही मै[24] कितेकनिसौ[25] रस सौहै[26]।
एक अटारी रहै पग[27] रीभि, घटै न मिटै न लटै बरज्यौ[28] है॥
चात्रगसी[29] सफरीके सलूक; भई नफरी अफरी अर त्यौ[30] है।
देषिबे राउरकौ[31] तरसै, दरसै कितह्वै परसै कित ह्वै हैं॥ ३३

---

३० १ ख तें। २ ख ग परोसी। ३ ख सवे। ४ ख को। ५ ख कहै।
६ ख. आपनके, ग. आपनिके। ७ ख गित। ८ ख क्यो। ९ ग. वसिवो।
१० ख चोथि को।

३१ ११ ख कालिंद्रीके। १२ ख लटें। १३ ख उघटें। १४ ख मुख पे।
१५ ख घटे। १६ ख. मनोजकै। १७ ख असमांनसों।

३२ १८ ख दरसे। १९ ख गति। २० ख. ताको। २१ ख कविता।
२२ ख गाय।

३३ २३ ख. दिनसें। २४ ख में। २५ ख निसों। २६ ख सोहैं। २७ ख पगि।
२८ ख बरज्यो। २९ ख चात्रकसी। ३० ख त्यो। ३१ ख. ग रावरे।

अथ श्रीकृस्नकौ श्रवनदरसन

यथा–पानकौ पान विधानकौ[1] मजन, भूले सुगध लगायवौ भोगी ।
ध्यानकौ साच गुमानकौ धारन, ज्यानकौ ग्यान करयो जिम जोगी ।
प्रेमपगेसे जगेसे पगेसे, रगे उमगेसे लगेसे विवोगी[2] ।
श्रैसे भए वलि बात सुनै सुन, जानिए देपै कहा गति होगी ।। ३४

अथ सुप्नदरसन लक्षन

दोहा–परम भावतौ[3] मित्र तह, सुपनै दरसै श्राय ।
सुपनदरस तासौ[4] कहै, सुभग रसनि सरसाय ।। ३५

अथ श्रीराधिकाकौं सुप्नदरसन

यथा–कोरि कलानिधि श्राधिक श्राज, लपै भरी[5] नीदमै त्यौं[6] श्रभिलापै[7] ।
चक्रत[8] चौप[9] चकोरनकी[10] किये, श्रौरकी[11] उपम[12] चूरिसी नापै ।।
सो छवि यौ सरसी सरसी, दरसै श्रनभौ[13] इन मो पल पापै ।
लागी हुतो सुवरी सुघरी, उघरी कित वैरनि वैरनि[14] श्रापै ।।३६

अथ श्रीकृस्नको सुप्नदरसन

यथा–चद श्रमदसी चंद्रिकासी लपी, सोवत ही जोही वाहो श्रहीरो ।
लागसी लालचसी गुन श्राधसी, ऊपमता नही जात कही री ।।
रगभरीसो हरीसी परीसो, षरी सुथरी श्रलकै विथुरी री ।
एन[15] सगी री सो रैनि[16] जगी लगो पापनी ए पलकै[17] न रही री ।।३७

अथ चित्रदरसन लक्षन

दोहा–चित्र देषि निज मित्रकौ, मनसुष पावै मित्र ।
लहिये[18] हित जामै श्रधिक, कहिये[19] दरसन चित्र ।। ३८

---

३४ १ ख को। २ ग विवोगी।
३५ ३ ख भावतो, ग भावतौ। ४ ख सो।
३६ ५ ख भर। ६ ख त्यो। ७ ख. श्रभिलाषें। ८ ख चक्रित। ९ ख. चोप। १० ख चकोरनिको। ११ ख. श्रोरकी। १२ ख उप्पम। १३ ख श्रनभो। १४ वैरनि।
३७ १५ ख देन। १६ ख रैन। १७ ख पलकें।
३८ १८ ख लहियै। १९ ख कहियै।

अथ श्रीराधिकाकौं चितदरसन

यथा– बृंदाबनचंदकी[1] सबीसौ[2] मन मोहित कै[3] ,
केते अभिलाषके हुलास ह्वै लसैं रही ।
नैननिसौ[4] नैननि लगाइ[5] टक[6] लाइ चढि ,
चाइ चौप चौगुनी[7] उपाइ[8] उमगै रही ।
रीझि रस भीजिकै दरस मतिवारी[9] ह्वै कै ,
मैनकी[10] तरंगनि तुरत तन तै रही ।
पत्र गहि अत्र फुरे मंत्र जत्र तत्र सम्र ,
चित्र देषै[11] मित्रकौ बिचित्र[12] आपु ह्वै रही ॥ ३९

अथ श्रीकृष्णकौ चित्रदरसन

यथा– देह चपलासी सिंधुवारी अबलासी[13] सौहै[14] ,
हासी चंद्रिकासौ नाही चंद्रिका लजायनौ ।
अलकनि ब्याल मोतीमाल लंक[15] हाल लषै[16] ,
जा तन बिसाल[17] अति सोभाकौ सराहनौ[18] ।
केती अंग-अंग रंग रंगनकै[19] संग केती ,
आवै न तरंग लाग्यौ आउत[20] उराहनौ ।
रूप उन हेरा नहि आवै उनहेरा यावै ,
मैंघौ[21] भयौ बृजमै[22] चतेराकौ बिसाहनौ[23] ॥ ४०

इति श्री नेहतरंगे राउराजा श्रीबुद्धसिंघ सुरचते चतुरबिधि दरसन्न निरूपण नाम दुतियौ तरंग

★

अथ नायकाभेद बर्नन

दोहा– मुगधा मध्या जानियें, तीजी प्रोढा नारि ।
च्यारि-च्यारि[24] बिधि[25] एकको, कबिता मत निरधारि ॥ ४१

---

३९ १ ख ब्रदावनचदकी । २ ख सखीसौं । ३ ख मन मोहितके । ४ नेंननिसौं । ५ ख लगाय । ६ ख छटक । ७ ख. चोगुनी । ८ ख उपायई । ग. उपायइ । ९ ख मतवारी । १० ख मेनकी । ११ ख देखें । १२ ख ग विचित्र ।

४०. १३ ख अवलासी । १४ ख सोहें । १५ लक । १६ ख लखे । १७ ख विशाल । ग विसाल । १८ ख सराहनो–ग सराहनौ । १९ ख रगनकौ । २० ख आवत । २१ ख. मेघो । २२ ख. ब्रजमें । ग ब्रजमें । २३ ख विसाहनो ।

४१. २४ ख च्यार-च्यार । २५ ख विधि ।

अथ मुगधाभेद

दोहा– नवल वधू[1] नवजोवना,[2] नवलग्रनगा[3] जानि ।
लज्जा-प्राय-रता-तिया, च्यारि भाति पहचांनि ॥ ४२

अथ नवलवधू मुगधालक्षन

दोहा– जाकौं कहि[4] नवलवधु[5], वढै ग्रग दिन-जोति ।
चढि-चढि त्यौ[6] ससि-वर-कला, ज्यौ-ज्यौं वढती होति ॥ ४३

यथा–ग्रगनसौ इत रगनसौ, उभलै ग्रग चादिनीसी छवि छाई ।
नैननितै प्रति - वैननितै[7], सक सैननितै सरसै सरसाई ।
ग्रैसी भई दिन च्यारिकतै[8], वृजचदहूकी मतिकी दुरसाई ।
देपत दूनी कलासी चढै सु, वढै दिन द्वैजके चदकी नाई ॥ ४४

अथ नवजोवना मुगधालक्षन

दोहा– जो नवजोवन बरनिये, मुगधाकौ यह रग ।
सिसुताई निकसै प्रगट, जोवन प्रगटै ग्रग ॥ ४५

यथा– ग्रव ही तै होत चली उकसौही[9] छतिया ये ,
वतिया हसौही[10] पूव सूरती सपत पै ।
कटि पर लूटि परी उन्नत नितवनकी[11] ,
जूट परी छवि कोर - कोरक नपत पै ।
तेरे ग्रग जाहर जवाहरकी जोति पर ,
गालिब गुलाव कौन चपाके बपत पै ।
फरकत नैननसौ लषती कहूसौ लपि ,
सपती परैगी[12] रवि[13] चदके तपत पै ॥ ४६

अथ नवलग्रनंगा मुगधालक्षन

दोहा– नवल-ग्रनगा होति तिय, मुगधा ग्रति सरसात ।
पेलनि बोलनि चलनि मृदु, कामकथानि[14] डरात ॥ ४७

४२　१ ख वधू । २ ख नवजोवना । ३ ख नवला-ग्रनगा ।
४३　४ ख कहियत । ५ ख ग नवलवधू । ६ ख त्यो । ग त्यौ ।
४४　७ ख वैननितै । ८ ख. च्यारकतै ।
४६　९ ख उकसौंहीं । ग उकसौही । १० ख हेसोही । ११ ख नितवकी ।
　　१२ ख परगी । १३ ख ग रवि ।
४७　१४ ख कामकलानि ।

यथा–लागी भले[1] बृजचदके नैननि, या छबि ता लगि नैननि भीनी ।
यौ[2] प्रगटी अग औरै[3] कछू, लषि नाजकता निज लक लै लीनी ।।
पास परोस कहा कियौ तै[4] बलि, अैसै प्रकास अकासलौ[5] लीनी ।
तै[6] उन नैन-पतगनिकौ[7] दिन च्यारितै[8] देहरी-दीपक कीनी ।। ४८

अथ लज्जा-प्राय-रता मुगधालक्षन

दोहा– लज्जा-प्राय-रता तिया, कहिए इहि विधि आनि ।
सुरत करै लज्जा लये, या लक्षिन[9] सौ-जानि ।। ४९

यथा–आवै नही नवला नव लालकी, सेज सषीजन केतौ जकीसी ।
नीठि बसीठकी दीठिसौ पीठि दै[10], सोई सकीसी जकीसी थकीसी ।।
नीबीकौ[11] लाल गह्यौ करमै, नष हीरनकी जहा जोति ढकीसी ।
मानौ[12]छ्प्यौ रवि[13]कजकली, चहु वोर[14]तरैया रही उझकीसी ।। ५०

अथ मुगधाकौ सुरत

यथा–आनी अलीन छली छलसौ, मिलि सोहत चचलासी उघरीसी ।
पीय समै[15] परिरभनकै, परजकपै[16] लकको लूरि परीसी[17] ।।
यौ छबिसौ परसै दरसै, सरसै इन उपमताई[18] हरीसी ।
ज्यौ[19]जबरी-जबरी जकरी, बसरी मनौ जालपरी[20] सफरीसी ।। ५१

अथ मुगधाकौ सुरतात

यथा–अैसे लसै रदनछित[21] तै, उठै प्रात समै छबि चदकी मोहै ।
भौहै[22] कलक सुधा अधरामृत, नैन कुरगनकी[23] गति जोहै ।।

---

४८ १ ख. भले। २ ख दों। ३ ख ओरें। ४ ख कियोतो। ५ ख अकासलो
६ ख. ते। ७ ख. नैन पतगन। ८ ख च्यारतें।

४९ ९ ख लक्षन।

५० १० ख. दें। ११ ख नीवीको। १२ ख मानो। १३ ख रवि।
१४ ख चवुं ओर। ग चहु वौर।

५१ १५ ख समें। १६ ख परजकषें। १७ ख परिसी। १८ ख ग उप्पमताई।
१९ ख. ज्यो। २० ख लाजपरी।

५२. २१ ख रद्नछित। २२ ख भोहे। २३ ख कुरंगनकी।

सिधु कढ्यौ सो[1] कढ्यौ इह रैनसौ[2], जात अकासहि असै रुकौ[3] है ।
बाधी ये[4] ज्यौ अलिमाल मनौ, अटक्यौ जुलफौकी जजीरनसौ है ॥ ५२

इति मुगधा

अथ मध्याभेदकथन

दोहा– मध्या आरुढ - जोबना, प्रगलभबचना नारि ।
प्रादरभूतमनोभवा[5], सुरतबिचित्रा[6] च्यारि ॥ ५३

अथ मध्या-आरूढ-जोबनालक्षन

दोहा– मध्या आरूढ - जोबनां, असै बरनि बिसेप ।
सरद-सुधाधर मुष-दरस, अग अग छबि न असेष ॥ ५४

यथा– थाल नभ आइकै[7] अक्षित नक्षित्र मेलि[8] ,
सोहै सुधा नेहसौ सनेह छबिधारी[9] है ।
सोलै-कला-बाती[10] साझबदन सुहाती सिषा[11] ,
चद्रिका ज्यौ काजर कलक उनहारी हैं ।
उदै ओर अस्ताचल सोही[12] दुहूओर[13] करि ,
सषी साथ जोरी सो चकोरी परचारी है ।
राधे सुनि रावरे बदन पर बारबार[14] ,
भारतीनै चदमय आरती उतारी है ॥ ५५

अथ मध्या-प्रगलभ-बचना लक्षन

दोहा– प्रगलभ - बचनां[15] जानिये, जाकी असी रीति ।
बचनन माझ उराहनौ[16], देइ दिपावै प्रीति ॥ ५६

यथा– सालत रसाल मालतीकी माल लालन ,
कटीली बनलतानकै लालच लटे रहौ ।
केतक[17] समैकौ सुष केतक-कलीसौ भूलि ,
सोनजुही माझ साझ - सवारे सटे रहौ ।

---

५२ १ ख कढ्योसो । २ ख रैंनिसौं । ३ ख ग रुको । ४ ख बाधियै ।
५३ ५ ख ग प्रादुरभूत–मनोभवा । ६ ख सुरत-विचित्रा ।
५५ ७ ख आनन । ग आइकै । ८ ख मेलो । ९ ख छविधारी । १० ख सोलै-कलावाली । ११ ख सिधा । १२ ख सोई । १३ ख दरीहू । १४ ख वारवार .
५६ १५ ख प्रगलभ वचना । १६ ख उराहनो । १७ ख. केतेक ।

ऐसी बलि काकै मति कुदकलिकाके काज ,
नेह करि कमलकलीसौ उचटे रहौ ।
लेहु अलिनायक[1] असीस निज सीस यह ,
निपट कपटकी लपट लपटे रहौ ॥ ५७

अथ मध्या–प्राद्गुर्भूत–मनोभवालक्षन

दोहा– अग-अग छबि छाइकै, रहै जु जोबन आइ[2] ।
प्रादुर्भूत - मनोभवा, ताहि कहै कबिराइ[3] ॥ ५८

यथा–काजरके षरसान चढी वै[4], बढी अषिया भ्रकुटी चढि बाढी ।
गात गुराईकै रगभरी सो, छटी कटि लूटि नितबनि चाढी ,
आय अचानक दीठि परी, सु वही[5] मग कुज कालिद्री कै ठाढी ।
चचलासी कैधौ चाद्रिकासी, कि चिराकसी चद्रसो चीरिकै काढी ॥ ५९

अथ मध्या-सुरत-बिचित्रालक्षन

दोहा– चतुर चाहि गति रति-समै, बिबधि भाय रति-रीति[6] ।
रति-बिचित्र तासौ कहै, कीनै पतिबस[7] प्रीति ॥ ६०

यथा–आजु लसै रतिरग समै, सरसै केती[8] अग-तरंगनि झोकै ,
आनन आननसौ उरसौ उर रीझि रही छबि ता अवलोकै ।
ता समै माग मिल्यौ लरबदीसौ, बीचि षुलै उपमानकी नोकै ,
भालपै टीका जरावकौ मानो, रह्यो रबि राहकी राहकौ रोकै[9] ॥ ६१

अथ मध्या-सुरतात

यथा– बिबधि-कलान केलि कीनी रसभीनी अति ,
रग-रस-सनी सब रजनी[10] बितै[11] रही ।
अरसौहै गात हरि प्रात उठि जात लषि ,
तियकी बदन - दुति जनै कौ किते रहो ।

---

५७ १ ख. अलिनाइक ।
५८ २ ख आइ । ३ ख कविराई । ग कविराइ ।
५९. ४ ख बे । ग बैंवडी । ५ ख. सुबही ।
६० ६ ख रति-प्रीति । ७ ख पतिवस ।
६१. ८ ख कैंती । ९ ख रोके । १० ख जगनी । ११ ख. वितै ।

फिरि मिलिबेको कह्यौ चाहत[1] कह्यौ न जात ,
भई अति छीन[2] पल ही मे तनतै रही ।
तरुन - तपन - ताप - तापत कुरग रुचि ,
लोचन न लाइ[3] मुपचदही[4] चितै रही ।। ६२

अथ मध्या-धीरालक्षन[5]

दोहा— पतिकौ साअपराध लपि, कहै जु कछुक जताय ।
मध्या - धीरा नाइका[6], तासौ कहत बताय ।। ६३

यथा— झिलि-झिलि वृ दन[7] सुजात[8] अरिविदनकै ,
कुदन-कमोदनकै मोद अनुकूले हौ ।
कहू[9] अनकूले कहू डूले[10] हौ सुबास-वस ,
कहू रसलोभकै सुभाइ लगि झूले हौ ।
सौरभ-सुरभन[11] सुजात मालतीन मिलि ,
हिए न[12] बिहार अनुराग निस फूले हौ ।
कैसे आजु सेवन सुगध तजि सेवतीकौ ,
किन भ्रम[13] बेलिन भ्रमर आजु भूले हौ ।। ६४

अथ मध्या-अधीरा

दोहा— पियसौ अति सतराइकै, बानी कहत न धीर ।
कबिजन तासौ कहत है, सो नायका अधीर ।। ६५

यथा— हासके बिलासनतै[14] चद्रिका - उजासनतै ,
प्रभाके प्रकासनतै जेब जुनियतु है ।
जोबन - तरगनतै सोभाके प्रसगनतै ,
रग - प्रति - रगन अनग लुनियतु है ।

---

६२ १ ख रह्यो चाहत । २ ख छीनि । ३ ख लोचन न चावक ।
४ ख मुषचवहि । ५ ख. लक्षणं ।

६३ ६ ख. मध्याधीरा नायका ।

६४ ७ ख झिलि-झिलि वृ दन । ८ ख सु जानत । ९ ख कहुँ । १० ख दूले ।
११ ख ग सोरभ-सुरभन । १२ ख हिरान । १३ ग किम भ्रम ।

६६ १४ ख. विलासनि ।

भौहन - कमाननतैं तीपे - नैन - बाननतैं ,
कानन - कसीसनतैं कैसे गुनियतु है ।
साधे केती भातिन समाधे केते साधनसौं ,
आजु - काल्हि राधेनैं अराधे सुनियतु है ॥ ६६

अथ मध्या-धीराधीरा लक्षन

दोहा— पियकौ देत उराहनैं[1], कछू त्रिग्यतैं[2] आय ।
धीर - अधीरा कहत है, ताहि महा कबिराय ॥ ६७

यथा— आजु दरसत परसत यन[3] भाइनसौं[4] ,
सारी राति जागत[5] उंनीदी छबि छै रही ।
कैधौं[6] काहु[7] जोगनसौं काहूके, सजोगनसौं ,
कैंधौं काहू लोगनसौं रिसकैं रिसैं रही ।
मेरी सौहै मोसौं जौपैं कहौगे न साची देषैं ,
सोभातैं सुहातैं लाल डोरे बिरझै रही ।
हितसौं हरीसी लागी एन बसरीसी सोहैं[8] ,
नेह-नफरीसी आपै सफरीसी ह्वै रही ॥ ६८

॥ इति मध्या ॥

अथ प्रोढ़ाभेदकथन

दोहा— कहि समस्त-रस-कोबिदा, चित्र-बिभ्रमा[9] जांनि ।
आक्रामति लबधा यहै, प्रोढा[10] च्यारि बषानि ॥ ६९

अथ समस्त-रसकोबिदालक्षन

दोहा— जो समस्त - रसकोविदा, ताकौ यहै उदोत ।
जहा[11] रीझि रीझत पिया, तंही[12] रीझ सम होत ॥ ७०

यथा— चपलाइ चौसर चबेलि गुन मौसर ता ,
चदन मिलन मिलि उपमासी जौन्हमै ।

---

६७ १ ग उराहनौ। २ ख त्रिग्यतैं।

६८ ३ ख. इन। ४ ख भाइनीसौं। ५ ख जागती। ६ ख केधो। ग कैधो। ७ ख कहूँ। ८ ख सौंहे।

६९ ९ ख ग चित्र विभ्रमा। १० ख प्रौढ़ा।

७० ११ ख. ग जहि। १२ ख. ग ताहि।

परम प्रकास नेह - दीपक सजोइ दसा ,
बृजके चवाय धूप अगरके हौनमै[1] ।
वृंदावन - चद - चित आरती उतारि लाज ,
ध्यान मुपचद चाइ चद्रिकाके भौनमै[2] ।
फिरि - फिरि साधे इनि नैननि समाधे वेई ,
तेही जु अराधे राधे आधीक चितौनमै[3] ॥ ७१

अथ प्रोढा-विचित्र-विभ्रमालक्षिन

दोहा— सो विचित्र[4] कहि विभ्रमा, जाकी ऐसी रीति ।
दीपति जाके देहकी, पियहि मिलावै प्रीति ॥ ७२

यथा—वोलिबौ[5] बोलनिकौ अवलोकिबौ[6], तीपे मनौजके[7] मत्रसे रापे ,
छूटी लटै[8] लग[9] केसरि-खोरि समान न उप्पमता नहि नापे ।
असे अनोषेसे अगनपै[10], भ्रमैं[11] भौर[12] ज्यौ प्रीतमके अभिलाषै ,
तेरी चढी-चढी आपिन ऊपर[13], वारौ वडी-बडी पकज-पापैं[14] ॥ ७३

अथ प्रोढा-आक्रामतिलक्षन

दोहा— कहि आक्रामति[15] नायका[16], जाकौ ऐसौ हेत ।
नायक बसि कीनौ[17] निपट, मन-बच-क्रमनि समेत ॥ ७४

यथा— आजु बलि सोहै ऐसै सारी बृजसपिनमै ,
उझली परत सोभा भारी अनुरागकी ।
सारी जालदार सो किनारी जरतारीदार ,
छूटे केसपास सोहै लक लगलागकी ।
तापै पुली महदी महाउर[18] सरस रंग ,
सौतिनके जोतिवेके जत्र तकतागकी ।
नहरै सुधाकी गति गहरै अनेक मानौ ,
छहरै छिपाकरतै लहरै सुहागकी ॥ ७५

---

७१ १ ख होनमें । २ ख भोनमें । ३ ख ग चितोनमें ।
७२ ४ ख विचित्र ।
७३ ५ ख ग बोलिवो । ६ ख अवलोकिवो । ७ ख. मनोजके । ८ ख लटें ।
९ ख लगि । १० ख अगनपे । ११ ख भ्रमे । १२ ख. भोर । १३ ख उपर ।
१४ ग. पकज पाषै ।
७४ १५ ख आक्रामनि । १६ ख नाइका । १७ ख जानो । ग कीनौ
१८ ख महावर ।

अथ प्रोढा-लबधातिय लक्षन

दोहा– तिय लबधा सो जानिए[1], बरनत[2] सुकबि[3] बषान ।
कुळ - लज्जा मांनत सकल, दीपति देव समान ।।' ७६

यथा– आजु छबि देत बलि राधे बृजचद साथ ,
अग - अग उमगत जोबनकी जौरेंतें[4] ।
केसरिकै रग नित रग सोहै केतकीके ,
कमल गुलाब कहा चपक निहोरेंतें ।
अैसे लषि रीझिकै लसत[5] रीझि कुज-भौन ,
उप्पम न[6] आवै कछु मेरे चित चोरेंतें ।
चांदिनी सुदेस-मुष-चदकौ[7] निहारि करि ,
चाकरसे ह्वै चले चकोर चहूँ ओरेंतै[8] ।। ७७

अथ प्रोढासुरत

यथा– सोहै परजक पर प्रीतमकै सग अैसे ,
राजै अग-अग प्रति आनद हिल्यौसौ है ।
बिथुरत[9] अलक सलिल श्रमजल छूटि ,
हार उर टूटि अग-अगन मिल्यौसौ है ।
अैसे बिपरीति समै आननकी छबि दोन्यौं ,
आय उपमांसौ इन नैननि तुल्यौसौ है ।
कलाकै षुल्यौसौ चद्रिकासौ[10] उझल्यौसौ ,
ज्यौ चल्यौसौ रबि राहु पर चद्रमा मिल्यौसौ है ।। ७८

अथ प्रोढ़ासुरतात

यथा– रैनिकी जागी सो प्रात जगै, षुले हारसौ अंगपै ओप बिजैठौ ।
यौ बिथुरी अलकै उरपै, अलकावलि एक उरोज अमैठौ ।।
पावन जानि अपावनकौसो, यहै जिय जानि मनोरथ अैठौ ।
सभुकै सीस महाबिष हाल, मनौ रुष ब्याल बिहाल ह्वै बैठौ ।।७९

७६. १ ख जानियें। २ ख वरनत। ३ ख सुकवि।

७७ ४ ख. जोरते। ५ ख लसन्। ६ ख. उप्पमा न। ७ ख सुदेषमुखचंदकौं।
८ ग चिहुंओरेतें।

७८ ९ ख विथुरक। १० ख चद्रकासौं।

अथ प्रोढा-धीरालक्षन

दोहा– प्रोढा - धीरा - नायका[1], धीरज लये अछेह ।
कछु रिस[2] प्रगटै पीयकौ[3], औैर ठौर लपि नेह ॥ ८०

यथा– मोरनके छद छूटि जटी[4], पुलि जावक भालमै लोचन लाये ।
अबर पीत बघबर ज्यौ, अगराग विभूतिनसौ छवि छाये ॥
जूटि भजगम त्यौ अलकै, मिलि चदसै भाल अमी बरसाये ।
रीझि कहौ पेस सबै, मेरे नेह सुदेस महेस ह्वै आये ॥ ८१

अथ प्रोढा-अधीरालक्षन

दोहा– पिय अपराधी जानिकै, रिस करि रूपी होइ ।
प्रोढा ताहि अधीर तव, वरनत है सब कोइ ॥ ८२

यथा– साची कहौ जाकी मानत सौह सो, कौनकै[5] नेह रहे सरसे हौ ।
रैनि जगी अषिया तरजी, बिरझी रग अगनसौ अरसे हौ ॥
जावो जहा मिलि आए तहा, हमकौ इन बातनिसौ परसे हौ ।
चद ह्वैकै कितहू दरसे, यतकौ[6] रबि[7] ह्वैकरिकै दरसे हौ ॥ ८३

अथ प्रोढा-धीरा-अधीरालक्षन

दोहा– धीरज बि अधीरकै[8], कछू कहति जो बैन[9] ।
प्रोढा-धीरा-धीर तिह[10], कहि वरनत कवि तैन[11] ॥ ८४

यथा– लोचन वै बरही जनके, अति रीझि रहे छकिसे छबि सौहै ।
रैनि रहे मिलिकै उतही, उमडे फिरि कौन हितू जति सौहै[12] ॥
आय यतै दरसे सरसे, घनस्याम यौं कौन गही गति सौहै ।
आजु बडी-बडी बूदनसौ, गरजे कित बरसे कितहू हौहै ॥ ८५

इति श्रीनेहतरगे रावराजा श्रीवुद्धसिघ सुरचते नायका मुग्धा-मध्या-प्रोढा-धीरादि-भेद निरूपण नाम त्रितियौ[13] तरग

---

८० १ ख ग. प्रौढा-धीरा-नायका। २ ख रस। ३ ग पीयको।
८१ ४ ख जटा।
८३ ५ ख फोनकै। ग फौनकै। ६ ख इतको। ७ ख रवि।
८४. ८ ख धीरा वहुर अधीर कै। ९ ख वेन। १० ख तीहि। ग तिहिं। ११ ख. तेन।
८५ १२ ग सोहै। १३ ख तृतीयो। ग त्रितयो।

अथ अष्ट-नायकाबर्नन[1]

दोहा– स्वाधिनपतिका उतका[2], बासकसज्जा[3] जानि ।
प्रोषितपतिका षंडिता, अभिसधिता बषानि ॥ ८६

दोहा– बहुरि बिप्रलबधा अवर, अभिसारिका अनूप ।
अष्ट नायका ये सकल, बरनत समय सरूप ॥ ८७

अब क्रमसौं[4] लक्षि लक्षिन कहत है

अथ स्वाधिनपतिकालक्षन

दोहा– पिय जाके गुनसौ बध्यौ, निसदिन रहै अधान ।
स्वाधिनपतिका ताहि कहि, बरनत सबै प्रबीन ॥ ८८

यथा– अगके ढग उपगके अगनि, हासी तरगनके संग तैसै ।
भूलै नही अलकै भ्रकुटी न, ललाटपै केसरिषोरि हमैसै ॥
और सबै ब्रजकी जुवती, नहि हेरत है ब्रजचद अनैसै ।
ज्यौ मुषचदकौ चाहिकै नैनन[5], चाहै चकोर नक्षित्रनि[6] जैसै ॥ ८९

अथ उत्कठितालक्षन

दोहा– जोवै अवधि - सकेतकौ, मिलन-बननकौं[7] जोइ ।
कहि तासौ उत्कठिता, परम पुरानै लोइ ॥ ९०

यथा–चद्रिकासी अबला चपलासी, लषै कमलासी सो सोभा लगीसी ।
सारी हरि[8] गहरै[9] रगसौ, उझलीसी गुराई परै उमगीसी ॥
लाषौ मनौरथकीसी[10] मिली, रही आवनि[11] लालकै आषौ षरीसी ।
चौकी[12] चकीसी, जकीसी बकीसी, टगी अटकीसी गढी है ठगीसी ॥ ९१

---

८६ १ ख नायका वर्णनं। २ ख उत्तका।
३ ख वासकसज्जा। ४ ग क्रमसौं।

८९ ५ ख नैंतन। ६ ख नक्षत्रनि।

९० ७ ख. मिलन वनको। ग मिलन वननकौं।

९१ ८ ख ग हरी। ९ ख गहरे। १० ख मनोरथकीसी। ११ ख आवन।
ग आवन। १२ ख चोकें।

अथ वासकसज्जालक्षन

दोहा– आगम आवन पीयकौ[1], जो तिय सजति सिगार ।
वासकसज्जा कहत है, तासौ कबि निरधार ।। ९२

यथा– सौधै[2] करि मजन[3] सुधारे केसपास भारे ,
धारे अग - अगन जलूसनके चावडे ।
चीर जालदार मिलि उझलत ओप घनै ,
ठौर - ठौर[4] चपकके बृदन[5] कनावडे ।
आज अैसै आवन तिहौर पर वृजचद[6] ,
वढ़ि चले सौतिनतै[7] मगज अगावडे ।
राजि[8] राखे उप्पम समझि राखे सोभा सर ,
सजि राखे लोचन सरोजनके पावडे ।। ९३

अथ प्रोषितपतिकालक्षन

दोहा–पति बिदेस जाकौ वसै, निसिदिन नीद बिहाय[9] ।
ताकौ प्रोषितप्रेयसी, कहि बरनत कबिराय ।। ९४

यथा– ऊधौ एक[10] सुनिवै[11] है अरज हमारी ओर ,
एते[12] पर उनहू कै मनमै न आती है ।
भौन भयौ भाकसीसौ साषसीसौ दिन भयौ[13] ,
राकसीसी रैनि भई देपै न सुहाती है ।
कहियौ जू एती दई मनमै जो आवै क्यौहू[14] ,
देषन जौ पावै केती कहिबे न आती है ।
चढि-चढि नेह-निधि कढि-कढि लाज हम ,
सुपै पानी सफरी लौ बढि-बढि जाती है ।। ९५

---

९२ १ ग पीयको ।

९३ २ ख सोधें । ३ ख मज्जन । ४ ख ठोर-ठोर । ५ ख व्रदन । ६ ख तिहारे व्रजचद भारे । ७ ख सौतिन तिके । ८ ख रीझ ।

९४ ९ ग. बहाय ।

९५ १० ख येक । ११ क सुनिवै । ग सुनिवे । १२ ख येते । ४ ख मोन भयो भाषसीसो साखसी रैनि भई राखससो दिन भयो । १४ ख. कहूँ ।

अथ षडितालक्षन

दोहा– और ठौर रति मांनिकै, पिय आवै परभात ।
ताहि षडिता जानिए[1], कहत बिंग्य[2] गहि बात ॥ ९६

यथा– लागे इतै न झुकै उतही, चित लागै नही जैसे देषे हमैसे ।
पीक कपोलनि अंजन[3] भाल, साहाल[4] लसै मिलि तत्रनि तैसे ॥
सारस-अंगनि आरससे भलै, आए इतै मेरे भागनि ऐसे ।
रैनि जगी इनि आषिनकौ, किनि कीनै[5] उपाइ घनतर कैसे ॥ ९७

अथ अभिसंधितालक्षन

दोहा– पियकै मान मनावतै, करै अधिक ही मांन ।
पछितावै पीछै मनै, अभिसंधिता बषांन ॥ ९८

यथा– पाय[6] परै मनुहारि करीहु, करि बात घनी बहु भायिन[7] भाष्यौ ।
प्रीति करी उन कोरि उपाइ, तऊ उनकौ हियकौ हित नाष्यौ ॥
कीजे कहा कहिए[8] कहि कौनसौ, गाढ घनौ अपनौ अभिलाष्यौ ।
मै मतिबौरी रही करि लाज, हहा हरिकौ भरि अंकन राष्यौ ॥ ९९

अथ बिप्रलब्धालक्षन

दोहा– कीनैं कौल संकेतकी, सषी बुलावत चाहि ।
आवै पिय पावै नही, बिप्रलबध कहि ताहि[9] ॥ १००

यथा– छूटे केसपास हारभार लंक लूटे जात,
जूटे जात भौहैं बर छबिता अमंदकी ।
अंग अवधारी सेतसारी मुषचंद मिलि,
जालदार लहंगा[10] लसत लाग छंदकी ।
कुंज-भौन[11] जाइ सूनौ[12] पाइकै संकेत फिरि,
फि[री] निज भौन चित चाइनकै मंदकी ।
आसपास आली जात उपमान चाली जात,
चांदिनीमै चाली जात चुगलीसी चंदकी ॥ १०१

---

९६. १ ख- जानियै । २ ख विंग । ग विंग्य ।
९७. ३ ख अंजनि । ४ ख. सुहाल । ५ ख कोनै । ग. कीनै ।
९९. ६ ख पाइ । ७ ख बहुभाइन । ८ ख कहियै ।
१०० ९ ग ताहिं ।
१०१. १० ख जालदार-लहगा । ११ ख कुंजभोन । १२ ख सूनो ।

अथ अभिसारिकालक्षन

दोहा– सजि सिंगार जो मिलनकौं, जावै पाय चलाय ।
ताहि तिया अभिसारिका, कहत सबै[1] कबिराय ॥ १०२

अथ सुकला अभिसारिका

यथा– सौंधे करि मजन सुधारि केसपास धूप,
अगर धुपाय गोरे आग छबि छैरह्यौ ।
चदमुप हासी चंद्रिकासी चादिनीसी आपु,
च्यारचौ ओर चाहिकै चकोरौ[2] चित चैरह्यौ[3] ।
तेरे बलि आजु अभिसारके[4] समाज पर,
पाज उपमांनकी डगन डग दैरह्यौ ।
छत्रपति छत्र लै चढचौ है मनमथ आजु,
निरषिन छित्रपति[5] छत्रछबि ह्वैरह्यौ ॥ १०३

अथ कस्नाभिसारिका

यथा– काजरसी का[री] निसि करत उज्यारी स्यांम,
सारी हू न दुरत जुन्हाई जालभरे हैं ।
चुहल मचावत नचावत चकोर हस,
चटकन चहु चह्लावत परे परे हैं[6] ।
ठौर - ठौर भौरनके भौरन जगावतसे,
त्यौं - त्यौ पैंड - पैंड कल - कोलाहल करे है ।
कैसै रगमहललौं सषी साथ पहुचौगी[7],
मेरे अग आली आजु मेरै बैर परे हैं[8] ॥ १०४

अथ दिवा अभिसारिका

यथा– चदमुष अबर कसूभी सोहै अग मिलि,
सोहै जालदारसो किनारी जरतारलौ ।
चौकि-चौकि[9] चचल-चकोर-गन चाले जात,
छूटे केसपास लागे लक - लग भारलौ ।

---

१०२   १ ख सबे ।
१०३   २ ख चकोर । ३ ख. चित चैरह्यो । ४ ख अभिसारिके । ५ ख क्षत्रपति । ग. क्षित्रपति ।
१०४   ६ ख खरे खरे हैं । ७ ख. पोहचेगी । ग पहुचोगी । ८ ख मेरे ओर परे हैं ।
१०५. ९ ख चोकि-चोकि ।

आजु अभिसार सोहै ग्रीषम समाज दिन
गुजि - गुजि लागे कुज - कुजन अपारलौ ।
आसपास च्यारचौ ओर सारे मग भौर ह्वै-ह्वै ,
उडि-उडि भौर भए[1] चौर घरी चारलौ ॥ १०५

इति श्रीनेहतरगे रावराजा श्रीबुद्धसिहै सुरचते अष्टनायका-
निरूपण नाम चतुर्थो तरग

*

अथ मिलन-स्यानबर्नन

दोहा— ध्याय[2] सहेली सुबन जल, सूनै घर भय मानि ।
ब्याधिजनी निस चार है, नौते[3] उत्सव जानि ॥ १०६

दोहा— मिलन - थान एही कहै, मिले इहाही[4] ढग ।
सबही मन बढिकै[5] करै, राजा - रक प्रसग ॥ १०७

अथ ध्यायके घरकौ मिलन

दोहा— मिली ध्यायके भौनमै, नदनदनसौ धाय ।
ज्यौ चलिकै मनु चद्रिका, लसै चद लपटाय ॥ १०८

यथा— साझहीसौ ब्रजबालनसौ, कथा-जालनमै रजनी दै अहूटी ।
फेरि चढै घनकै नभमै, बाल-ध्यालके हालकी चाल बिछूटी ॥
धाय कह्यौ चलौ मदिरमै, तहा राधिके ठाढी है ऊपम लूटी ।
लूटगी[6] देषत ही हरिकै, रबि चदकी ज्यौ किरनै छति[7] छूटी ॥ १०९

अथ सहेलीके घरकौ मिलन

दोहा— अली सहेलीकै भुवन, मिली चाद ब्रज आय ।
ज्यौ जुग - राकाके मनौ, चंद - चाद सरसाय ॥ ११०

यथा— हेरि हसौ बसौ नेहसौ लाल जो, ल्याई हौ या कबितानसी गाई ।
घेरो चकोरन भोरनकौ, अरबिंदन हू समता कित पाई ॥
सारी मिलै जरतारीकी जालसौ, सो उपमा उरमै अधिकाई ।
गैंगसी टूटिकै षूटि कला, त्यौही चादसौ छूटिकै अगन आई ॥ १११

---

१०५ १ ख उमडि उमडि भोर भये घरी चारलौं । ग वौंर घरी चारलौं ।
१०६. २ ख ग धाय । ३ ख न्योते । ग नौतै ।
१०७. ४ ख ढग । ५ ख वलिकैं । ग बढ़िकै ।
१०९ ६ ख ग जूटगी । ७ ख ग. छिति ।

अथ सुवनमिलन

दोहा– लसै[1] बिपन-घन-सघनमै,[2] मिली चद-व्रज चाय[3] ।
दपति छिति ऊपर मनौ, देव-कला दरसाय ॥ ११२

यथा– आनद हेत घना-घन-कुजमै, राधिके राजत साथन आली ।
आए[4] तहा हरि रोभिसौ भीजि सु देषी छकी लिये रूप अराली ॥
त्यौ मुषतै सितसारी षुलेते, वे धाय[5] लिये उपमा या सभाली ।
टूटि उतग मनौ सिवसीसतै, छूटिकै ज्यौ छिति गगसी चाली ॥ ११३

अथ जलविहारकौं मिलन

दोहा– जलबिहारमै मिलनकी, रहि उपमा यौ जूटि ।
ज्यौ[6] जुग-चद चकोर-जुग, चषनि-चाहि रहि[7] लूटि ॥ ११४

यथा– रैनि समै सलिता मधिमै, नदनदन राधे लसै यौ तिरे है[8] ।
सोहै कमोदनिसी सषियां, परसै अति आनद-रगभरे है ॥
यौ दुहु-वोरनकी[9] छबितासौ, समाजसौ आषिन बीचि धरे है ।
ज्यौ ससि साथ नछित्रनकै, प्रतिबिब त्यौ छूटि दुहूउघरे हैं ॥ ११५

अथ सूनै घरको मिलन

दोहा– मिली भुवन सूनै मही, उपमा रही सुहाय ।
मानौ दीपति देहकी, मिली देहसौ आय ॥ ११६

यथा– आजु परोसनि मदिर सूनै, मिली ब्रजचादसौ राधे छलीसी ।
सोहै प्रमा(भा) दिनसी अगसौ, उभलै प्रति-अगनि भाति भलीसी ॥
ता छिनकी उपमा अति सो मन, मेरेमै आयकै असै चलीसी ।
छूटि लसै घनके वन वीच, मनौ चकि चचला चद मिलीसी ॥ ११७

अथ भयकोमिलन

दोहा– मिली जाय भयकै समै, यौ व्रजचद सुहाय ।
मनहु[10] चदहूसौ लगी, चपलासी चपलाय ॥ ११८

---

११२. १ ख लसें। २ ख विपन पननमें। ३ ख आइ।
११३ ४ ख आयें। ५ ख वे धाय।
११४. ६ ख ज्यों। ७ ग रही।
११५ ८ ख सों निरे हें। ग यों तिरें हे। ९ ख दुहुं वोरनकी। ग दुहू वोरनकी।
११८. १० ख मनो। ग मनहू।

यथा– पारे[1] परोसके आगि लगै, करे लोगु बुझावनकौ उघटैसी ।
ता छल पाय मिली ब्रजचदसौ, तू चितकी करिके सिमटैसी[2] ॥
यौ मन मेरेमै आवत[3] है, डर भूलि इतै न करै चपटैसी ।
दौरि[4] सबै झपटैगे इतै, सो लगी लषि पावककी लपटैसी ॥ ११६

अथ ब्याधि-मिसकौ मिलन

दोहा– ब्याधि - भुवन असै मिली, नदनदनसौं जूटि ।
मानौ सफरी झरफि जल, मिली जालसौ छूटि ॥ १२०

यथा– आजु[5] कछू अग आरसतै, सो जतायकै राधे समाज मिली है ।
ता समै आए इलाजनकौ, बहिआ नदनदन हाथ मिलो है ॥
छूटि रही अलकै[6] उरपै, ब्रजचदके रग मिले उझली है ।
मानहु सीसतै चदलता, असिता षुलि धार हजार चली है ॥ १२१

अथ जनीके भुवनकौं मिलन

दोहा– जनी - भुवन असै मिली, नदनदनसौ आय ।
छूटि मनौ कुमदनि[7] मिली, चाद - चद्रिका छाय ॥ १२२

यथा– आजु[8] ग्वालबाल[9] मिलि भारी-भौन[10] अगनमै ,
पेलके प्रसगनमै भीर न समाती है ।
हसि-हसि चहुधा[11] कहत आपि मूदि पेलै ,
जूटी - जूटी घिरत फिरन ताती - ताती है ।
कानलौ बडौहै नैन राधिकाके मूदे हरि ,
षुलिकै[12] निकारि ताकी सोभा बरसाती है ।
अफरीतै जलतै तरफरी सम्हारी मनौ ,
टूटै जाल सफरी ज्यौ छूटि-छूटि जाती है ॥ १२३

अथ निसचारकौ मिलन

दोहा– लसत साथ निसचारमै, नदनदनसौ आय ।
चद घनाघन जालमै[13], दुरचो मनौ दरसाय ॥ १२४

---

११६ १ ख पार । २ ख सिमटोसी । ३ ख आवती । ४ ख ग दोरि ।
१२१ ५ ख आज । ६ ख अलकै ।
१२२. ७ ख कुमुदनि ।
१२३ ८ ख. आज । ९ ख ग्वालु बालु । १० ख भारीभोन-अगन । ११ ख चहुधा ।
१२ ग षुरिकै ।
१२४. १३ ख लजा ।

यथा– पूजनकौ ब्रजदेबीकौ रैनमैं, ध्याए सबै न रह्यो घरमै है ।
छूटी घटामै लुटै रूप राधिके, भेट भई हरिसौ झरमैं[1] है ॥
यौ मिलगे दोऊ नेह-छके[2], उपमा मन मेरे नयीं भरमै है ।
ज्यौ[3] घन सत्थ सुधाधर मानौ, छिपै छबि देत ज्यौ अबरमै है ॥ १२५

अथ न्यौंतेको मिलन

दोहा– नौतेकै मन्दिर मिली, नदनदनसौ जूटि ।
जैसै षुलि रविसौ मिली, जनु सरोजनी षूटि ॥ १२६

यथा– जैवन पास परोसकै राधे, गई जबै सौहै करोर छली है ।
देपि अकेले तहा नदनदन, लाज कछू उर माझ फली है ॥
चीर गह्यौ हसिकै स्यामरगकौ*, यौ उपमा उरमे उझली है ।
कजतै त्यौ पुली पूटि उतावली, ज्यौ अलि-आवली छूटि चली है ॥ १२७

अथ उत्सवको मिलन

दोहा– उत्सवकै मन्दिर मिली, नदनदनसौं आय ।
फारि घटा चादहि मिली, बिज्जु छटासी जाय ॥ १२८

यथा– रातिजगै ब्रजमैं ब्रजदेवीकै, आय सबै छितिकी धन जूटी ।
राति घटै[4] नीद आषिन आये, करी प्यारै राधिके आनद लूटी ॥
चुबन दै उघरे[5] मुपपै वदी[6], मोतिनकी उपमा यो विछूटी ।
पूटी करोरन सथ्य[7] मनौ, तमपै छुटि चदकी पकति टूटी ॥ १२९

इति श्रीनेहतरगे रावराजा श्रीबुद्धसिह सुरचते मिलन-स्थान निरूपण नाम पचमो तरग

*

अथ सपीजनबर्नन

दोहा– धाय नटी नायनि जनी, और परोसनि नारि ।
माल्नि वरथनि[8] सिल्पनी, चुरेहेरी[9] निरधारि ॥ १३०

---

१२५ १ ग. जरमें। २ ख नेंनके। ३ ख है।

१२९. ४ ख घटि। ५ ग उघरी। ६ ख वेंदी। ७ ख सध्य।

१३० ८ ग ग वरयनि। ९ ग दुरहेगी। *'रग स्यामको' ऐसा पाठ होना चाहिए।

दोहा– रामजनी सन्यासनी, अवर[1] सुनारि सुनाम ।
पटयनि एती कहत है, सषी मिलनकी[2] बाम ॥ १३१

अथ धायकौ बचन श्रीराधिकासौं

दोहा– करत चलाकी चचला, महाबलाकी सोर ।
चदमुषी चलि राधिका, मिलिए नंदकिसोर ॥ १३२

यथा–मोतिन-माल[3] नपित्रन फैलिकै, चद्रिका-हासि[4] ज्यौं छबि छाये ।
लाज सरोजनि मुद्रित कै[5] चित, मोदक मोदनिकौ[6] सरसाये ॥
प्राची-दिसा चढि चायनपै[7], अति आनदसौ या दसा दरसाये[8] ।
य्यौ तेरे नैन-चकोरनपै, बृजचाद मनौ चलि चदसे आये ॥ १३३

अथ धायकौ बचन श्रीकृष्णसौं

दोहा– लाई हौ हित रावरै, तन - उपमासौ जूटि ।
रहि चकोर चषं छूटिकै[9], चादकलासी टूटि ॥ १३४

यथा– अजन वक कलक[10] पुलै, तार-हारन-मोतिनकी छबि छाई ।
हासी लसै चाद्रिका ज्यौ कमोदसी, आलिन सग अमी बगराई ॥
छूटत कुज-धनाघनसौ बन, लूटतसी तिहुलोक निकाई ।
रावरै नैन चकोरनपै आजु, चद ज्यौ चदमुषी चलि आई ॥ १३५

अथ नटीवचन श्रीराधिकासौं

दोहा– चहु-दिसितै चपला चमकि, उठै घोर घन आय ।
जूटि - जूटि ता मिलनकौ, लुटी - लुटी दरसाय ॥ १३६

यथा– स्याम लसै घन-अवरसे, अलकै धुरवानिहूसी[11] अवधारे ।
चचला टूटि पितबरकी[12] दुति, बूदन[13] मोतिन-हार सुधारे ॥
आजु या कुजनकै[14] मिलबे, अभिलाष ज्यौं मोरनके उर धारे ।
चदमुषी तेरे लोचनपै, बरिषारितु ज्यौ बृजचद सिधारे ॥ १३७

---

१३१ १ ख अबर । ग अवरि । २ ख मिलीनकी ।

१३३ ३ ख. मोतिनु-माल । ४ ख ग चद्रिका-हासिन । ५ ख मुद्रिके । ६ ग मौदनिकौ । ७ ख चाप तपें । ८ ख पद सारद गायें ।

१३४ ९ ख. चूटिके ।

१३५ १० ख ग कलक ।

१३७ ११ ख ग. हुसी । १२ ख पीताबरकी । ग पीतवरकी । १३ ख ग बूदन । १४ ख. याके जनके ।

अथ नटीको वचन श्रीकृस्नस

दोहा– आजु मिले मिलिये बनै, सुनौ बात बृजचद ।
चाहत है तुमकौ वहै, ज्यौ चकोर मुषचद ।। १३८

यथा– अबर नील-घटासी षुले, मोतीहारन बूदन ज्यौ बरषाई ।
छूटि लसै अलकै धुरवासी त्यौ, हासीनपै तडिता छबि छाई ।।
घूघटकै उघरै उघरै[1] मुषचदकी[2] ज्यौ उघरै परछाई ।
नैन तिहारे ज्यौ चातकपै, चलि बाल किधौ[3] बरषारितु आई ।। १३६

अथ नायनिको वचन श्रीराधिकासौं

यथा– परत पुज अति बिरहके, तम - निकुज घहराति ।
तू न चकीसी[4] चलति किन, महाबकीसी[5] राति ।। १४०

यथा– अबर-पीत षुलै कदली, अभिलाषन - पल्लव त्यौ सरसाये ।
छूटि झरै अगराग - पराग, सुगधन सीतल मद जताये[6] ।।
हार लसै फुलवादि-बहारहिं, तू[7] जन कोकिल कीरति गाये ।
षजनसे तेरे नैंननिपै, बृजराज मनौ रतिराज ह्वै आये ।। १४१

अथ नायनिको बचन श्रीकृष्णसौं

दोहा– परी चाहि उहि चटपटी, मिलन बारकौ हेरि ।
जैसी लागी चदकी, ज्यौ चकोर अवसेरि ।। १४२

यथा– भौरन-भौरन साथ लये, लये कोकिल साथ लसै चतुराई ।
फूल अनेक ज्यौ अबर साजि[8], सुगध-सुगधनकी सरसाई ।।
काल्हिके केते निहोरनिसौ,करि द्यौर-जिठानीकी सक न लाई ।
नैन-सरोज तिहारेनपै, रतिराज[9] ज्यौ चदमुषी चलि आई ।। १४३

अथ जनीको वचन श्रीराधिकासौं

दोहा– अग - सिंगार फुलवादि ज्यौ, तेरे मिलन इलाज ।
आये है वृजराज यत[10], साजि मनौ रतिराज ।। १४४

---

१३६ १ ख उघरैं-उघरैं । २ ग मुष ओपम । ३ ख किशोर ।
१४० ४ ख ग नचका । ५ क महावकासी ।
१४१. ६ ख जुताये । ७ ग. तु ।
१४३ ८ ग अवर साझि । ६ ग रातिराजि ।
१४४ १० ग. इत ।

यथा– भूषन-जोति मनौ षुलिकै, किरनै कढिकै[1] अगसौ सरसे है ।
अबर - पीत अताप बिषेरिकै[2], चश्लता अहितूकरसे है ॥
आवत या बनि बानिकसौ, मग-कुज इही छबिसौ परसे है ।
राधे तो नैन-सरोजनिपै, बृजचद ज्यौ सूरजसे दरसे है ॥ १४५

अथ जनीकौ बचन श्रीकृष्णसौं

दोहा– लाल तिहारे मिलनकी, वह बलि करत उमाह ।
ज्यौ घनकी नितिप्रति रहै[3], चातककै उर चाह ॥ १४६

यथा– अगनसौ फुलवादिसी षूटिकै, ताप दै सौतिनपै अतिसी है ।
धूम दै ऊनत-कुजनपै षुलि, हासिन चद्रिका कीजतिसी है ॥
कापत गात ससक जिठानीसौ, सासके त्रासन त्यौ गतिसी है ।
चाहिकै[4] तो हितसौ ब्रजचाद वा, आवत आजु छहौ रितसी है ॥ १४७

अथ परोसनिकौ बचन श्रीराधिकासौं

दोहा– आजु तिहारे मिलनकौ, नदनदन उमहात ।
लसै बढयौ[5] उपमानसौ, चद चढयौ यत[6] आत ॥ १४८

यथा– जे सिव साधि समाधिन-साधन, बेद-पुराण[7] कहै अनुरागी ।
ध्यावै जिनै नर देव अदेव, बिरचिहुकै[8] मुष कीरति जागी ॥
धारे जिन्है[9] तिहु लोक उधारि, मिलापकी आतुरता अति लागी ।
चदमुषी सुनि री बृजचांदकै, तू बडे भागनि आषिन लागी ॥ १४६

अथ परोसनिकौ बचन श्रीकृष्णसौं

दोहा– लाल तिहारे मिलनकौ, वह बलि चित बरजोर ।
ज्यौ अभिलाषन लाषतै[10], 'रहे मोर घन ओर[11]' ॥

यथा– अजन षूटि लसै बिषसो, सोही[12] हासी सुधारससै अतिसी है ।
बक-चितौनी सुरा, मुषचाद अमद लिये चाद्रिका जतिसी है ॥

---

१४५ १ ख. कटिकै । २ ग बिषेरिक ।
१४६ ३ ख हरै ।
१४७ ४ ग वाहिकै ।
१४८ ५ ख. चढयौ । ६ ख ग बढयौ इत ।
१४९ ७ ख वेद-पूराण । ८ ख विरह । ग विरचिहूकै । ९ ग. जिनै ।
१५० १० ग. लाषतै । ११ ख. रहै मोर घन ओर ।
१५१ १२ ग साहा ।

मोतिन-हार हिये षुलिकै, पग-जावकसो गति पावकसी है ।
दीपति दीप मिलौ बृजचद वा, आवति आजु नदीपतिसी है ।। १५१

अथ मालनिकौं वचन श्रीराधिकासौं

दोहा– कछु उघरयो-उघरयो चहत, अवै[1] चाद चढि आत ।
क्यौ कपाट[2] उघरत जरत, परत राति इतरात ।। १५२

यथा– अगनकी प्रति-अगनकी[3] षुलि, चाद्रिका जाल हिये अवरेपै ।
फैलेसे त्यौ मृदु - हासनमै[4] नहि, सुद्ध सुधा बसुधा न विसेपै ।।
हार - नक्षित्रनकी उछटै कित, तारनकी उपमा अनलेपै ।
तो मुषचदकौ[5] देपतही, समता बृजचद न चादकौ देपै ।। १५३

अथ मालनिकौ वचन श्रीकृष्णसौं

दोहा– वहिं[6] आलीकौ मिलनकी, चाह रहत चित पास ।
रैनि - दिना जैसे लगी, रहै फूलमै वास ।। १५४

यथा– आजु हौ ल्याईहौ गोपसुता बलि, रभाहुसौ[7] रतिसौ अगलीसी ।
चौकि चकौरनहू चहुओरतै, भौरन हसनहू मगलीसी ।।
चूनरी स्याम समाजनतै परै, चाद्रिका अगनतै उगलीसी ।
चाही चिराकन[8] चापकहू,स मिली मानौ चद्रमाकी चुगलीसी ।। १५५

अथ वरयनिकौ वचन श्रीराधिकासौ

दोहा– ज्यौ किरनपति[9] किरनिकी, आस धरत अरविंद ।
चदमुषी तो मिलनकी, चाह करत बृजचंद ।। १५६

यथा– कौन दई यह बाय बलायलौ, नैक परै नहि नेह नवेरू ।
लाज सके बिभुकेसे[10] थकेसे, जकेसे रहै तिहि रूपके तेरू ।।

---

१५२ १ ख. अवे । २ ख कपटि ।

१५३ ३ ख अति अगनकी । ४ ख मृदुहासनि । ग. मृदुहासन । ५ ख. मुषचदके ।

१५४ ६ ख. ग वह ।

१५५ ७ ख रभाहुते । ८ क निराकन ।

१५६ ९ ख किरननपति । १० ख. विछकेंसे ।

तो मुपचदके देपनकौ लगि, चाय रही उपमा उरझेरू ।
पेमके[1] फदनमै पहुचे[2] वे, परे पिजरानके जानि पपेरू[3] ॥ १५७

अथ वरयनिकौ बचन श्रीकृष्णसौं

दोहा– वह बलि कीयौ मिलनकौ, चितबृति[4] चप झुकि झौर ।
मिलि सरोज प्रतिरोजकौ, ज्यौं भूलत नहि भौर ॥ १५८

यथा-- आजु मै ल्याई हौ गोपुसुता छबि, सोहत तैसी प्रभानकी सैली ।
चादिनी ज्यौ अंगअगन छूटिकै, जूटि समेटिकै सारी उजेली ॥
सोहत है अति यौ दरमै[5], उपमा मन मेरेमै अैसे उझेली ।
आवत वा मग-कुजनकै, चहुओरतै मानौ चिराकसी[6] फैली ॥ १५९

अथ सिलपनीकौं बचन श्रीराधिकासौं

दोहा– उनहि मिलनकी झटपटी, निपट नटपटी नीति ।
लगी हगनि अति चटपटी, परी अटपटी रीति ॥ १६०

यथा– ता पर देव-अदेव-कुमारि, उतारिकै लाजके साज धरैगी ।
ता मुषकी मधुरी - मुसकानिसौ[7] चद बहारकौ मद करैगी ॥
ता हरिकौ तू निहारिबौ चाहत, क्यौ गति तो मति यौ निसरैगी ।
जागीसी ज्यौ रति-रगनसौ, आषे[8] लागी तौ लागी तौ लागी रहैगी ॥१६१

अथ सिलपनीकौं बचन श्रीकृष्णसौं

दोहा– बकी - बकीसी रहत निसि, थकी - थकीसी गेह ।
लपी - लषी ता दिन वहै, बिकी - बिकीसी देह ॥ १६२

यथा– टीका जराऊ[9] सुधारससै[10], मुष भारै तमोरनि वोप सुधारै ।
धारै हरे षुलि अवरकै, षोरि केसरिकी दये सुद्ध कतारै ॥
भूषन हीरनके छहरै, छूटे बार त्यौ मोतिनसौ उरझारै ।
आवत आजु तिहारै लिये, मग राधिके अग नऊ गृह[11] धारै ॥ १६३

---

१५७ १ के पेमेके । २ ग. पहुचे । ३ ग जानि पषेरू ।
१५८ ४ ख चितव्रत । ग. चितवृति ।
१५९ ५ ख ग दरसै । ६ ग राकसी ।
१६१ ७ ग मधुरी मुसकानि । ८ ग आषेपे ।
१६३ ९ ख जराय । १० ख सुधारससो । ११ ख नवग्रह । ग नउग्रह ।

अथ चुरेहेरनिकौ वचन श्रीराधिकासौं

दोहा— मोतिन - माल नक्षित्र[1] मिलि, अंग - अग छबिछद ।
याते तेरे मिलनकौ, चदमुषी बृजचद ।। १६४

यथा— सासके लगर टूटतसी, वृजनारि त्यौ छूटि मिल्यौ अभिलाषै ।
देवकुमारी अदेवन-नारिसो, गौरिकौ पूजि बिचारमै राषै ।।
ता वृजचदकौ तू अब मोहि, बुलायकै देत मिलापकी साषै ।
प्रीति इलाजसौ लाजसौ धोई री, हाथसौ षोई री बैरनि आषै ।। १६५

अथ चुरेहेरनिकौं वचन श्रीकृष्णसौ

दोहा— मिलन रावरै काज हरि, बाढत[2] नेह अछेह ।
दीप तिहारे दरस उन, की[3] पतगसी देह ।। १६६

यथा— रावरी बातै सुभायकै[4]भायसौ, चाहिकै भाय[5]कहू जी चढैगी ।
ता पर आवन यौ तमको, मग फैलिकै चादनी कुज मढैगी ।।
मोहि महा[6] डर है धौ बडौ, पढै मत्रन जत्र अनेक बढैगी ।
राधिकाकी वे बडी-बडी-आपै, गडी तो गडी न वे काढी कढैगी ।। १६७

अथ रामजनीकौ वचन श्रीराधिकासौं

दोहा— मुष - मयक - परकासकी, मिलि है जौति मयक ।
रगरलो करिकै अली, चलि अब कुज निसक ।। १६८

यथा— आजु बुलावनकौ वृजचदकी, वोली मै जाय घरी-सुघरी है ।
फूल्यौ हियौ बहिया फरकी,हरषी अषिया अति रीझि भरी[7]है ।।
सोहत असे समाजनसौ , उपमा मन आयकै यौ निषरी है ।
मानौ चकोरनकै अभिलापपै, चदकी छूटि कला बिखरी है ।। १६९

अथ रामजनीकौ वचन श्रीकृष्णसौं

दोहा— अफरी-अफरी भुवनमै, मिलन तिहारे चीति[8] ।
परी तरफरीसी लसै, जल - सफरीकी[9] रीति ।। १७०

---

१६४ १ ख नक्षत्र ।
१६६ २ ख. वाटत । ग वाढत । ३ ग कीड ।
१६७ ४ ख सुभाईकै । ५ ख भाई । ६ ग माहा ।
१६९ ७ ख अति रागि भरी ।
१७०. ८ ख मीति । ९ ख सफरीक ।

यथा– ल्यावत आजु[1] तिहारे मिलापकौ, गांवही तै[2] और राह गही[3] है ।
कैसै[4] करो उघरी परे[5] अबर, अग[6] छिपायौ तऊ न छही है ।।
भौरके भौर समाज[7] चकोरन[8], तैसै पतगनि देह दही है ।
काहू चिराक कही चपला कही, चद्रिका काहूनै चद कही है ।। १७१

अथ सन्यासनीको बचन श्रीराधिकासौं

दोहा– अतनबृ द[9] दाहत तनहू, चाहत मग घनस्याम ।
मधुप - पुज गुजत परे, चलिन कुज बलि बाम[10] ।। १७२

यथा– काहूसौ[11] बात करै मन षोलै, न डोलै न कुजन चाहि बगी[12] है ।
मैलेसे[13] गात सुहात महा, उपमा अनाघात ज्यौ चद पगी है ।।
भूलीसी भूष बिसारेसे पान, नही सुधि न्हान समाधि जगी है ।
जानी परै नहि हौनौ[14] कहा, उनकै मुष एक तुही तू लगी है ।। १७३

अथ सन्यासनीको बचन श्रीकृष्णसौं

दोहा– पीरीसी नीरी[15] दरस, वह बलि सहज - सुभाय ।
रैनि-दिना[16] लागी रहै, दृगनि[17] रावरी चाय[18] ।। १७४

यथा–या डरसौ तुमसौ छलसौ करि, बातै अनेक बनाय अथागै ।
भादौहूकी या कुहूकी निसामधि, ल्याई हुती तमसौ छबि लागै ।
अगन-अगनकी षुलि जात वै, जोतिके जाल अगाऊलै बागै ।
लागत लूटि प्रभानकी[19] सैलीसी, फैलीसी[20] आवति चादिनी आगै ।। १७५

अथ सुनारिको बचन श्रीराधिकासौं

दोहा– लोक-लाज निदरी सबै, प्रगट तरफरी प्रीति ।
भलै लई यन[21] नैनतै, जल - सफरीकी रीति ।। १७६

---

१७१ १ ख ग आज । २ ख तें । ३ ख. गई । ४ ख केसें । ५ ख परें ।
६ ख आग । ७ ख समाझ । ८ ख ग वारेंनते ।
१७२ ९ ख अनतवृ द । ग अततबृ द । १० ख ग वाम ।
१७३ ११ ख काहूसो । १२ ख वगी । १३ ख मेरेंसो । १४ ख होनों ।
१७४ १५ ख नारि । १६ ख रेनि-दिना । १७ ख द्रगन १८ ख चाह ।
१७५ १९ ख अभानकी । २० ख फेलीसी ।
१७६. २१ ख. ग भई यन ।

यथा–आजु गई ही जसोमतिकै, सो मिले नदनदन प्रीति उघारै ।
मोसौ करी बडी बेरहु लौ[1], मनुहारि महा अभिलाप उजारै ॥
आजु तिहारे मिलापहूकौ, दोऊ नैन रहे उपमा उनहारै ।
चाय-चपे-चित-चातक[2] चौकि, त्रिषानकी त्राससौ चाच[3] पसारै ॥ १७७

अथ सुनारिकौ वचन श्रीकृष्णसौ

दोहा– लाल तिहारै दरस उन, लगी दृगनि जक जाफ ।
न्यारी भई न नाच है, चाहत भयौ जुराफ ॥ १७८

यथा–आई तिहारे मिलापनकौ, रति-रभासी गगाहूसी गहरैसी[4] ।
केसरि-षौरि षुली अलकै[5], बसै[6] अग-सिगारनकी वहरैसी[7] ॥
ता पर यौ चहु-चादिनीकी मिलि, केसनि बीचि लसै कहरैसी ।
मानहु सीस छिपाकरकै छुटि, जाल-नक्षत्रनकी[8] छहरैसी ॥१७९

अथ पटयनिकौ[9] वचन श्रीराधिकासौ

दोहा– हौ[10] पठई तुव[11] लेनकौ, अब कित चहत वसीठ ।
जगी - जगी अनुरागसौ, लगी - लगी वे दीठि ॥ १८०

यथा–कोऊ[12] कहौ भल[13] कोऊ सुनौ, कछू होत कहा कहि बात न[14] नाषै ।
द्यौरजिठानी रिसानी जौ सासु, बसानी कहा चितकै अभिलाषै ॥
देषै[15] बिना जिन्है[16] कैसे सरै, जिनकी सषि बेद-पुराननि साषै[17] ।
आपनी[18] एन सगी जिनकी, सुलगी जेरी लाषनि बीचि वै आषै ॥१८१

अथ पटयनिकौ वचन श्रीकृष्णसौ

दोहा– मिलन - लगन लागी लगै, मनमै रही उमाहि ।
लवै सचानक लौ लगी, चषनि अचानक चाहि[19] ॥ १८२

---

१७७ १ ख. बेरहीलो । ग बेरहू । २ ख चाप-चपे-चित-चातक । ३ ख चोच ।
१७८ ४ ख ग गेहरैसी । ५ ख अलकें । ६ ख बसें । ७ ख वहरैंसी ।
८ ख लाज-नक्षत्रनकी ।
१८० ९ ख पटवनिकौ । १० ख हो । ११ ख तुब ।
१८१. १२ ख ग कोउ । १३ ख. भलो । १४ ख वातनि । १५ ख देख ।
ग दैषै । १६ ख जिह । १७ ख वेद पुरानमैं सार्खे । १८ ख अपनी ।
१८२ १९ ख वाहि ।

यथा– बक-मयक नषछदसौ षुलि, तारन-हारनकी छबि छाई[1] ।
भारे[2] सुगध समीर लयं[3], सग नायकके सरसै[4] सरसाई ।।
कीजे कहा चित[5]टोकी कहू, मिलि ल्याईय तें[6]करिके चतुराई ।
मेरे ए[7] नैन सरोजनपै[8], कितसौ बनि आई है सौति जुन्हाई ।। १८३

अथ सषी-कर्मकथनं

दोहा– सछ्या[9] बिनय मनावनौ, करै सिंगार मिलाइ ।
झुकै रु देत उराहनौ[10], ए सषीनके भाइ ।। १८३

अथ सछ्यालक्षन

दोहा– सीष देत कछु समुझिकै[11] दपति हिय सुण पाय[12] ।
ताकौ सछ्या[13] कहत है, कविकोबिद समुझाय[14] ।। १८५

अथ श्रीराधिका कहु सछ्या

यथा–बानिक तें[15]बनिके सजनी, चलिए वनसौ मिलिए बलि जाही[16] ।
चाहत या सुणकौ सगरी सुख, मै दुणकौ गहिबौ है बृथा ही[17] ।।
जा हरिकौं नर देव-कुमारि, करै तप कोटि लहै नहि छाही ।
नाहीसौ नाही करौ बलि नाही री, नाहसौ नाही निबाहन नाही ।।१८६

अथ श्रीकृष्णकौं सछ्या

यथा– मिलै बिन देणै[18]बलि प्रीतिरीति असी बिधि ,
चाद्रिका चमेली[19]चारु चौकनि[20]निसार है ।
उन दिन बिन उन घरि बिन पल बिन ,
सौरभ सरागी बिन चापक[21] बहार है ।
मिलन बसत दई आस[22] जौ न करतौ तौ ,
निबहत कैसे नेह लागे इकतार है ।

---

१८३ १ ख छाई। ग चाहि। २ ख ग भार। ३ ख लयें। ४ ख सरसे।
५ ख चितये। ६ ख ल्याई इतें। ७ ख मेरे ये। ग मेर ए।
८ ख सरोजनियें।

१८४ ९ ख. सिष्या। १० ख. उराहनो।

१८५. ११ ख समुझिकें। १२ ख सुखपाई। १३ ख सख्या। १४ ख समुझाई।

१८६. १५ ख बानिकसों। १६ ख चलियें बलि रावरी सो मिल जांई। १७ ख. व्रथाई।

१८७ १८ ख देखो। १९ ख चमेंली। २० ख. चोकनि। २१ ख पकज।
२२ ख आसा।

गहरी[1] गुलाब छूटि भौर जरि स्याह भयौ ,
भौर छूटि सूलनि गुलाब वारपार है ॥ १८७

अथ विनयलक्षिन

दोहा– करै बीनती दुहुनकी[2], सपी जोरिकै पानि ।
ग्रथनिमै कवि कहत है, तासौ विनय वपानि ॥ १८८

अथ श्रीराधिका कहु[3] विनय

यथा– देपनकौ मन त्यौ तरसै, तरसै श्रुति बोलनकौ जु महा री ।
त्यौ मिलवै वहियां तरसै, परसै जु नही[4] अभिलापन भारी ॥
कौन मिलावै कहा करिए, मनहूकी दसा इन बातन हारी ।
चदमुपो मुप देपिवेकौ, सु लई इन आपिन पीर उधारी ॥ १८९

अथ श्रीकृष्ण कहुविनय

यथा– वा गुनकी अगरी-अगरी, सगरी लये रीति सुग्रथनि गाही ।
जो पै[5] कहा भयौ वात कहा, कहिवै सुनिबै मै कछू कहि आही ॥
अैसै नही[6] वलि यौ करिवौ, मिलिये चलि आनदकै मनमाही ।
क्यौ करौ नेहकी बातनमै, सु तिहारै सुनी मुष या नई नाही ॥ १९०

अथ मनावनलक्षन

दोहा– ढाहि देत हठ दुहुनकौ, रस करि दैहि मिलाइ ।
तासौ कहत मनाइवौ, कवितामै कविराइ[7] ॥ १९१

अथ श्रीराधिका कहु मनायवौ

यथा– मोर ज्यौ[8] हेरत मेघनिकौ, हिय हस ज्यौ सागरकौ मन टेरै[9] ।
ज्यौ अलि हेरत कजनिकौ, प्रति-हेरत ज्यौ अरबिंद उजेरै ॥
मानिए मरी अती[10] बिनती, मिलिये सपिया वे रही मन फेरै ।
चौकि-चकेसे[11] रहे चहुघा, सु चकोरनि[12] ज्यौ विन चाँदकौ हेरै ॥ १९२

१८७　१ ख गहरे ।
१८८　२ ख दउन । ग दुहूनकौ ।
१८९　३ ख. कौ । ग कौ ।　४ ख जुत ही ।
१९०　५ ख यें । ग जो पै ।　६ ग अैसौ नहि ।
१९१　७ ख कविरायौ ।
१९२　८ ख ज्यो ।　९ ख टेरे ।　१० ख इती । ग अति ।　११ ख चोके-चकेसे ।
१२ ख चकोरन ।

अथ श्रीकृष्ण कहुं मनाइबौ

दोहा– आपनेसें परमान चलौ, हरि या बृजमै[1] निबहै रस कैसें ।
मांन करै वह तौ इह[2] बूझिए[3], आप करौ उलटी गति तैसें ॥
एतौ[4] भलौ अधिकौ न मनाव है[5], मेरी सौ बात बनावन[6] अैसें ।
काहूकौ बीच दै बीच न पारौ, मिलौ बलि ज्यौ मिलि आए हौ जैसें ॥ १९३

अथ सिंगारलक्षन

दोहा– सजै सिंगार दुहूनके[7], सोरह बिबधि बनाइ ।
ताहि सिंगार बषानिकै, कहत सबै कबिराइ ॥ १९४

अथ श्रीराधिका कहु सिंगार

यथा– अंजन मंजन कै दृग - रंजन, षंजन चंचलताई चुराई ।
मांग बनी सजनी सिरि ज्यौं गिरि, बिंधपै गंगकी धार धसाई ॥
टीका जरायकौ साथ लसै मिलि, भालपै बदनकी चतुराई ।
बैनी बनाय गुही[8] बलि आजु मै, मानौ भुजंगनि पाष[9] लगाई ॥ १९५

अथ श्रीकृष्ण कहु सिंगार

यथा– स्याम-सरीर[10] लसै पट पीत, मनौ घन-दामनि रूप भयौ है ।
बीरा[11] बन्यौ मुख साथ मनौहर, यौ उमह्यौ[12] अनुराग नयौ है ॥
मोरकी चंद्रिका मोहै महा मन, अंग-प्रकासनतै उगयौ है ।
चंदसे आननपै दिये षौरि, सुचंदनकी चित चोरि[13] लयौ है ॥ १९६

अथ मिलैबौलक्षन

दोहा– काहू बिधि चित[14] दुहुनकौ, मिलै मिलावै आनि ।
ताहि कहत मिलाइबौ, कबिजन सबै बषांनि ॥ १९७

अथ श्रीराधिकाकौ मिलाइबौ

यथा– मेरो कह्यौ सुन्यौ सो हितकौ, मिलि लालसौ मानि कह्यौ सगलौ है ।
रीझत है सजनी सगरी, जिनसौ तुमसौ दिनमान तलौ[15] है ॥ १९८

---

१९३ १ ख ग व्रजमें। २ ख ईह। ३ ख बूझियें। ४ ख ऐतौ। ५ ख मनाइवो। ६ ख. बनावत।
१९४ ७ ख दोहूनके। ग दुहूनके।
१९५ ८ ख गुहा। ९ ख लाख।
१९६ १० ख स्याम शरीर। ११ ख वीरा। १२ ख उमयो। १३ ग. चोर।
१९७ १४ ख चित्त।
१९८. १५ ख दिन मीत मिलो है।

गौतिनकौ सुष हौ तिनमै, सु तौ सौतिनकै भयौ चाला चलौ है ।
आजु भली पल आजु भली छिन, आजु घरी दिन आजु भलौ है ॥ १९८

अथ श्रीकृष्णकौ मिलाइबौ

यथा–मोद भयौ सजनीगनमै चहुं, कौद भरचौ रस-सायर तैसै ।
लागे चकोरनलौ चष दौरि, फिरे न फिरै इक सेवनि वैसै ॥
राधिकसौ अति आधिक पाय, मिले हरि-सग सषागन अैसै ।
ऊग्यौ नछित्रनिसौ[1] मिलि[2] मानौ, कमोदनिके कुलपै ससि जैसै ॥ १९९

अथ भुकनलक्षन

दोहा– जो[3] सुपदायक निज हितू, कोउक औगुन देषि ।
पिजै दुहुनकौ सहजमै, भुकिबौ ता कहु पेषि[4] ॥ २००

अथ श्रीराधिका कहु भुकिबौ

यथा–रावरी रौस परी यह कौन[5], कहौ[6]सुपमै कह[7]रोस रढावै[8] ।
मेरे बनाये बन्यौ रस आय, सु काहेकौ[9]और सी बात कढावै ॥
स्यानप होइ तौ[10]आवै कछुक न तौ सुक लौ दिनमान पढावै ।
मान बढावत हौ उनसौ इत, मोसौ कहा बलि भौह चढावै ॥ २०१

अथ श्रीकृष्णकहु भुकिवौ

यथा–मै जु कह्यो नदनदनसौ, मिलिबेके सुभावकी रीति भनीलौ ।
पाई कहातै दिठाई इती, सो न गाई परै गुनवते गुनीलौ ॥
आछी कहै उलटी समुभै, मन होत कहा अभिमान घनीलौ ।
त्यौ-त्यौ भई चित चौगुनीसी, दुगनी तिगुनी भई आठगुनीलौ ॥ २०२

अथ उराहिनै[11] लक्षिन

दोहा– विना भावती[12] बात लपि, ढुलपै तिनकौं आय ।
नासौ कहत उराहिनौ, सवै सुकबि मन लाय ॥ २०३

---

१९९ १ ख नक्षत्रनिसौं । २ ख मिल्यो ।
२०० ३ ग जौ । ४ ख पेंखि ।
२०१ ५ ख. कौन । ६ ख. ग कहा । ७ ख कहा । ८ ख वढ़ावै ।
९ ख कायेकौं । १० ख मानहोय तो ।
२०३ ११ ख. उराहना । ग उराहनो । १२ ख भावनी ।

अथ श्रीराधिका कहू उराहिनौं

यथा–तू बडे मानभरी अभिमान, कितै कहिबै सुनिबै अवधारी ।
तौपे[1]न तेरे न आवै कछू, मन आछी न अैसी दसा जो निहारी ॥
यौ बढि बोलिबौसौ उनसौ, वै तौ[2]चाहि लगे तेरे रूप उजारी ।
हेरि हिये हरिके हितकौ सु, हहा बलि हौ इन बात निहारी ॥ २०४

श्रीकृष्णकौं उराहिनौं

यथा–मानसकौ पहिचांनत[3]नाहि, सबै रसरीतिकी रौस थकी है ।
जात जहा फिरि जात जहा[4], सकुचौ न तहा[5]गति या अधिकी है ॥
सावरौ रूप सलौनौसौ देषिकै, भौरी वहै भ्रम पाइ छकी है ।
गाथ कहौ हरिजूकी अकाथ, हहा हरि रावरे हाथ बिकी है ॥ २०५

अथ सषी-बाकि-लक्षन[6]

दोहा– पियका सषि तियसौ [7]कहत[8], तियकी पियसौ आय ।
रसहि बढावै सो[9] सषी - बाकि कहैं कबिराय ॥ २०६

अथ श्रीकृष्णकी सषीकौ बचन श्रीराधिकासौ

यथा–आजु[10]किती बडीबारहू लौ, उन मोसौ कही किती बात तिहारी ।
तेरी कहावतिकौ कहिकै, पछितावत केरि महा वनवारी ॥
मेरे कहै मिलिए चलिकै सो, सुधासौ सनी लिये रूप उजारी ।
चाहि रहे वे चकौरनि ज्यौ, बलि मानिए हौ मुपचदपै वारी ॥२०७

अथ श्रीराधिकाकी सषीकौ बचन श्रीकृष्णसौं

यथा–चदसी[11]चद्रिकासी तजिकै सु, रहे मन सौंषि जिकै इक सातै ।
या बलिकैं अभिमान महा मन, है सो तौ रावरे नेहकै नातै ॥
तापर आप ईतौ करिए सुनि, आई पै[12]क्यौ न सुनाई न जातै ।
तासौ मिले सो निहारी-निहारी हौ,तौ बलिहारी तिहारी ये बातै ॥२०८

---

२०४. १ ग. तोपें । २ ग व तो ।
२०५ ३ ख पहिचानित । ग पहिचानत । ४ क जाहां । ५ ख जहा ।
२०६ ६ ख. सषीवाक्य लक्षन । ग सषीवाकि । ७ ख तियकों । ८ ख. कहति ।
९ ख ग बढ़ावहि ।
२०७ १० ख आज ।
२०८. ११ ख चद्रसी । १२ ख आइयें ।

अथ चेष्टालक्षन

दोहा– पिय प्यारि[1] लषि परसपर, अति अँडात जम्हात ।
चितवै मुरि मुसकै हसै, सो चेष्टा कहात ।। २०९

अथ श्रीराधिकाकी चेष्टा

यथा–आजु कछू बारबार जम्हाइ, कछू सरसाइकै मोद मढी है ।
त्यौ-त्यौ महा अगरावै कछू, अरसाय[2] रही मनमै न दढी है ।।
साची कहौ बलि मेरी सौ मोसौ, सु तू सुनि कैसे सुभाव कढी है[3] ।
दो अलि-पकतिसी बढिकै, भृकुटी चढि भाल अकास चढी है ।। २१०

अथ श्रीकृष्णकी चेष्टा

यथा–आवत जात हौ जानि न जात[4], कछू गति-गूढसे पाठ पढी है ।
बार ही बार उठौ अगराइकै, हासि महा मन्न[5] मोद मढी है ।।
चाहसौ कौन उछाह भरे सु[6], कहा अभिलाषकी बात रढी है ।
चदसे भालपै भौहै बढी, अषिया चढि आजु अकास चढी है ।। २११

अथ स्वयदूतलक्षन[7]

दोहा– क्यौहु न दपतिकौ बनै, मिलबौ मनभय मानि ।
बुधि-बल[8] हौहि बसीट तह, स्वयदूत पहिचानि ।। २१२

अथ श्रीराधिकाकौ स्वयदूत

यथा–तैसी अधेरीसी रैनि[9] रही, चमकै तह चचला चाइ[10] लगैकौ ।
भारी त्यौ भौन रु सूनै परोस त्यौ, सूनीसी एकषिलाइ सगैकौ[11] ।।
कान[12] सुनौ इह बात नई सु तौ, मोहि महा डर लागै अगैकौ ।
आजु अली मिलिकै ननदीकै, गई सब रातिकै रातिजगैकौ ।। २१३

अथ श्रीकृष्णकौ स्वयदूत

यथा–तैसैही कुज रहै अलि गुजत, तैसे चपक चाल गही है ।
कोयल मोर मराल चकोर[13] चितै चहुओरनि चौप चही है ।।

---

२०९ १ ग प्यारी ।
२१० २ ख अरसाई । ३ ख कटी ।
२११ ४ ख जानिकै जात । ५ ख महामनी । ६ ख भरयो ।
२१२ ७ ख स्वयदूति । ८ ग बुद्धि-बल ।
२१३ ९ ख रैनि । १० ख चाप । ११ ख एक लीलाई सगैको । १२ ग. कान ।
२१४ १३ ख चकोरन ।

देषिए नेक निहारि उतै, रतिराज महा मन मोद मही है
सायर सोहैं सरोजनिसौ, तैसे चन्द्रमा चादिनी छूटि रही है ॥ २१४

इति श्रीनेहतरगे रावराजा श्रीबुद्धसिंह सुरचते सषीजन कर्मचेष्टा
स्वयदूत निरूपणनाम षष्टमो तरग

*

अथ मानलक्षन

दोहा– अति हितते अनुरागुतें, अंग गरब छबि छाइ[1] ।
ताही सौ कबिबर सकल, कहत मान अधिकाय ॥ २१५

अथ मानभेद

दोहा– लघु मध्यम गुरु मानिए[2], प्रिय प्रति तिय अधिकाय[3] ।
प्रिय त्रिय प्रति प्रगटात है, कहि बरनत कबिराय ॥ २१६

अथ लघुमानलक्षन

दोहा– कामनि और बिलोकतें, नेननि देषै आय ।
उपजत है लघु मांन तह, कहै सकल कबिराय ॥ २१७

अथ श्रीराधिकाकौ लघुमांन

यथा–आरसी मदिरमै रिस राधिकें, बैठि चढी भृकुटी[4] लटें षूटी ।
ता छबि नैंक निहारतही[5],आजु कौन वे नारि न होति ज्यौ लूटी ॥
ता समैकौ सषिया चहुधा घिरि, मान मनावन उप्पम[6] जूटी ।
चदकें ज्यौ आसपासनि छायकें, पति[7] नछित्रनकी छबि छूटी ॥ २१८

अथ श्रीकृष्णको लघुमानलक्षन[8]

दोहा– कह्यौ करै नहि पीयकौ, तिया कौन हू भाय ।
उपजत है लघु मान तह[9], प्रीतमकें उर आय ॥ २१९

यथा–मोहन आजु कछू बलि राधेसौ, मानकी रीति हिये उघटी है ।
ता समै आय सबै सषिया, सो मनावनकौ अति बातें थटी है ॥
ऐसें अनेक समाजनसौ, उपमा मेरो आषिनमै उछटी[10] है ।
जैसें कमोदनिके कुलपै, ससि छूटि मनौ किरनै प्रगटी हैं ॥ २२०

---

२१५ १ ख ग. छाय ।
२१६ २ ख मानये । ३ ख अधकाय ।
२१८ ४ ख भ्रकुटी । ५ ख निहार तहाँ । ६ उपय्यम । ग उप्पमा ।
७ ख पकति । ग. पति ।
२१९ ८ ख लछिन । ९ ख ग तहँ । १० ख उछूटी ।

अथ मध्यम-मानलक्षन

दोहा– करत बात पिय औरते[1], अवलोकै तिय आनि ।
तमकि भौह सतराय तह, मध्यम-मान बषानि ॥ २२१

अथ श्रीराधिकाकौ मध्यम-मान

यथा–राधिके[2] रोसमै आजु लषी, गरै मोतिनकी मिलि माल बिछूटी ।
बातै बकै सक सैन थकै, असै नाषै कितेकसी घातै अफूटी[3] ॥
गोरी मनावनकौ सब दौरीसी, जे उपमा मन मेरेमै जूटी ।
लै[4] छबि यौ अध-अबरतै, चपला मनु चद मनावन टूटी ॥ २२२

अथ श्रीकृष्णकौ मध्यम-मानलक्षन

दोहा– किहू भाति मानत नही, तिया मनावत पीय ।
उपजत मध्यम - मान तह, आनि पीयकै जीय ॥ २२३

यथा–आजु कछू बलि राधिकासौ[5], हरि सोहत रूठिकै बैठे[6] अपूठै ।
आय घिरी चहुऔरनतै, यौ मनावन लागी सषीन अहूठै ॥
ता छबिकौ लषिकै इहि भायसौ[7], दौरी यो[8] उप्पमता न अनूठै ।
चदमुषी चहु औरनतै, मनु चदकौ[9] चद मनावत[10] रूठै ॥ २२४

अथ श्रीराधिकाकौ गुरु-मानलक्षन

दोहा– देषि चिन्ह कछु सौतिकौ, सुनि वाकौ हित साज ।
उपजि परत[11] गुरमान तह, कहत सबै कबिराज ॥ २२५

यथा–मद भयौ पियकौ मुष चदसौ[12], चद्रिका हौन चली सरनै है ।
सौतिनके[12] षुले नैन-सरोज, हितू चित जैसै मुद्रा बरनै है ॥
मोतिनहार नषित्रन - जोति, यौ मानसमै उपमा झरनै हैं ।
जेठ समै मानौ तापसौ तूटिकै, छूटि परी रबिकी किरनै हैं ॥ २२६

---

२२१ १ ख ओरतें ।
२२२ २ ख श्रीराधिका । ३ ख ग अहूटी । ४ ग ले ।
२२४ ५ ख. राधिकाको । ६ ख वैठि । ७ ख. इहिभाईसौं । ८ ख होरी ।
९ ख मनोचदको । १० ख मनावन ।
२२५ ११ ख जग्त ।
२२६. १२ ख मुख चन्द्रसो । १३ ग सोतिनके ।

अथ श्रीकृष्णकौ गुरुमानलक्षन

दोहा– तजि मरिजादा जगतकी, बचन कहति तिय[1] आन ।
प्रीतमकै[2] उर आय तह, उपजत है गुरुमान ॥ २२७

यथा–राधेसौ[3] आजु कछु नदनदन, भारी हिये मन मान भरचौ है ।
सारी सषीन मनावनकौ, मिलिबेकौ तऊ मनहू न करचौ है ॥
ता छबिकौ लपिकै छकिकै, मन मेरौ यौ उपम्मताई तरचौ है
साझ[4] समै अरबिदनपै ससि, सोलै कलानि लये उघरचौ है ॥ २२८

दोहा– तजै मान प्रीतम प्रिया, बाढै[5] उर अनुराग ।
ते षट-बिधि बरनौ अबै, सुनौ श्रवन-रस-लाग ॥ २२९

दोहा– सांम दान भेद रु प्रनत[6], और उपेछा होइ ।
पुनि प्रसग बिध्वस अरु, डडन बरनै[7] कोइ ॥ २३०

अथ स्यामलक्षन

दोहा– क्यौहू रसमय होत है, दपति मान निवारि ।
तासौ साम उपाय सब, कबिजन कहत बिचारि ॥ २३१

अथ श्रीराधिकाकौ साम-उपाय

यथा–हौ पठई कबकी मत लैन, सौ तेरै कहा कितहू मन भायौ ।
कौनसी बातन कैसी करै, नहिं जानत कैसै कहा समझायौ ॥
और सीमेटि सबै चितकी[8], मिलबौ करिए अति ही अकुलायौ ।
तू सुनि री बलि चदमुषीसो, चलै क्यौ न चद सिराहनै आयौ ॥ २३२

अथ श्रीकृष्णकी साम-उपाय

यथा–जा दिन तै भये रावरै मान[9], सम्हारै न बातनकी गहराई ।
वा दिनकी उन बातनपै बलि, कीजिये क्यौ यतनी[10] सतराई ॥
वाकै[11] भये मुष रूषै कछू, ज्यौ सबै सषियानकी उप्पम छाई ।
रातिकै आवन[12] पातिकी पाति, मनौ जलजातकी जात लजाई ॥ २३३

---

२२७ १ ख त्रिय । २ ख पीतमके ।
२२८ ३ राधेसे । ४ ग साज ।
२२९. ५ ख वाढै ।
२३० ६ ख ग प्रतन । ७ ग वरनै ।
२३२ ८ ख चितको ।
२३३. ९ ख ग मीन । १० ख इतनी । ११ ग. वाके । १२ ग आबन ।

अथ दानलक्षन

दोहा– कैहू छल करि व्याज मिस, मान देहि वहराइ ।
मोहत मन मधुरे बचन, सोहै दान - उपाइ ॥ २३४

अथ श्रीराधिकाकौं दान-उपाय

यथा–केती मजूरी सुधारि कमान, भर्‍यौ भलका जिहि बीच सराहै ।
हेरि समुद्रसौ[1] लाल मगायकै, लाषनि साथ लई लपि लाहैं ॥
ल्याई तिहारे सिगारकै काजु, छकी मति रीझि लषै छवि ताहै ।
मोलके[2] मैंघेसौ मोती मनौ, नथ मोतिय-चद मिल्यौ मुष चाहै[3] ॥ २३५

अथ श्रीकृष्णकौं दान-उपाय

यथा–रातिके जागतही वृजचद, निहारत आरसी ज्यौ सरसी है ।
पीछैसौ आय मनावनकौ, सुपसौ प्रतिबिव दै कै परसी है ॥
आपनै कठकौ हार हिये पर, डारत उप्पमता दरसी है ।
फेरि फिरै मुषचदकी ओर[4], मनौ करि काम-कमान कसी है ॥ २३६

अथ उपाय-भेदलक्षन

दोहा– जाहा[5] आपु[6] अपनायकै, तुरत छिडावै[7] मान ।
सवै सपिन सुष देत है, भेद-उपाय सुजान[8] ॥ २३७

अथ श्रीराधिकाकौ भेद-उपाय

यथा--प्रातहुतै[9] मुष पान दये नहि, रैनि जगी अंषिया अनुरागी ।
याहीतै मै पठई सबही मिलि, वोलन साथ बडी बडभागी ॥
चालौ मिलौ उठिकै हितसौ, उनकी असै चाहि रही उरझागी[10] ।
चक्रत[11] चाहि चहूदिसितै, अवसेरि ज्यौ चद-चकोरन लागी ॥ २३८

अथ श्रीकृष्णकौ भेद-उपाय

यथा--लाल यती बिनती सुनिये, चलिये वैही भौनकौ प्रीतिकी रीतै ।
औरको और भई जवतैं, वह जैसे रही सफरी बिन मीतै[12] ॥

---

२३५. १ ख ग जाय समुद्रसो। २ ख मोलक। ग मोलकै। ३ ख मुखवाहै।
२३६ ४ ख. वोर। ग और।
२३७. ५ ख जहा। ६ ख आप। ७ ख. छिपावै। ८ ख ग सुजानु।
२३८ ९ ख प्रातहू ते। ग प्रातहूंतै। १० ख ग उर लागी। ११ ख चकित।
२३९ १२ ग विज सीतें।

वे उनकी सिगरी सषिया, अषिया न रही उपमानकी नीतें ।
मानौ रहे कुल पकजके, बरषा रितु पाय बसतकें बीतें ॥ २३९

अथ प्रनत-लक्षन

दोहा– महा मोहतें कामकी, अति आतुरता पाइ[1] ।
पिव प्यारी पाइन परें, सो है प्रनत - उपाइ ॥ २४०

अथ श्रीराधिकाको प्रनत-उपाय

यथा–प्रानपियारेके मान समैसो, अली परी पायन यौ परसै है ।
फैलि रहे मुष ऊपरसौ कच, अगन - रगनसौ बरसै है[2] ॥
ता छिन ही उपमा यनसौ[3], मन मेरेमै आयकें यौ बरसै है[4] ।
मानौ घनाधन-जालकें बीच, छिपाकर छूटि कछू दरसै है ॥ २४१

अथ श्रीकृष्णको प्रनत-उपाय

यथा–राधेकें पाय परें हरि त्यौ, मुष ऊपर केस परें बसरी है ।
छूटि कछू छबिता उन बीचतें, यौ बरसाय कछू निसरी है ॥
सो समता चुभि आंषिनमै, मन मेरेमै आयकें यौ वसरी है ।
ज्यौ घनकें रबिजाल मही, कढि पार कछू किरनें पसरी है ॥ २४२

अथ उपेक्षा[5] लक्षन

दोहा– मान तजै जातें सुतजि[6], औरें परसंग आनि ।
छूटि जाइ[7] जिहि मान मन, उहै उपेछा जानि ॥ २४३

अथ श्रीराधिकाकों उपेछा

यथा–चद्रिका फैलि चहू दिसितें[8] न, सु तौ चद्रहासन चौप चढचौ है ।
बोलें चकोर बदीजनसे, त्यौ[9] कमोदनिपैं दल भीर मढचौ है ॥
आजु मिलैगी कोई ब्रजचदसौ, तू मिलै क्यौ न बियौग दढचौ है ।
सोहै नक्षत्र बीच[10] बढचौ यह, चंद नही रतिराज चढचौ है ॥ २४४

---

२४० १ ख पाय। ग पाई ।

२४१ २ ख अब अगन-रगनसौ परसै है। ३ ख उपमाइनसों। ४ ख. आयके यौं सरसै हैं।

२४३. ५ ख. उपेक्षा। ६ ख सुतज। ७ ख जाहि ।

२४४ ८ ख दिसतें। ग दिशतें। ९ ख ते। ग त्यौं। १० ख बीचि।

अथ श्रीकृष्णकौं उपेक्षा

यथा–सोहत सजल घन - फौज चहु-वोर[1] फैलि ,
मधुप - मतग सम उर आवरेषिये[2] ।
चपला न हौहि ए चमक चद्रहासनकी[3] ,
बदीजन बरही पपीहा लेषै लेषिये[4] ।
गरजै निसान बोलै कोकिल नकीबगन ,
मान - गढ ऊपर सजत भय भेषिये ।
पावस - समाज सुभ बैगै राजतिलक लैं ,
आजु रतिराज[5] एक राज जग देषिये ।। २४५

अथ प्रसग-विध्वसलक्षन

दोहा– चितमै भय भ्रम आनिकै, मान तजत तिय पीय ।
सो परसग[6] बिध्वस यह, बरनत कबि कमनीय ।। २४६

अथ श्रीराधिकाकौ परसग-विध्वस[7]

यथा–घोरि-घटा-घन घेरि रह्यौ घर, त्यौ चपला चमकै अति औडी[8] ।
तैसिय सीतल मद - सुगध, लगै परवाईन होगी कनौडी ।।
चालिकै जो मिलिए बृजचदसौ, चाहि धरै मन माहि अचौडी ।
तू सुनि री सु यतै लपि बैरनि, देही[9] फिरै केती कोयल डौडी ।। २५७

अथ श्रीकृष्णको प्रसग[10] बिध्वस

यथा–च्यारचौही औरतै जोरि[11] रहे, घन सोर करै मिलि मोर पपीहा ।
चचला छूटि लसै बहसै भर, भूमि[12] समीरन साथ कपीहा ।।
एती करौ बिनती मिलिए, रहि वाही तिहारै सनेह जपीहा ।
दै हित नैक निहारौ इतै, पर वाहरौ केतौ पुकारै पपीहा ।। २४८

इति श्रीनेहतरगे रावराजा श्रीबुद्धसिंह सुरचते मानमान-मोचन
विधि निरूपणं नाम सप्तमो तरग

---

२४५ १ ख चहु ओर । २ ख अवरेषियें । ३ ख चद्रिहासनकी । ४ ख. लिखिये ।
५ ख रितुराज ।

२४६ ६ ग प्रसग ।

२४७ ७ ख ध्वस । ८ ग ओडी । ९ ख ग. देती ।

२४८ १० ख प्रध्वसग । ११ ख जोर । ग. जोरि । ११ ख भूम ।

अथ पूर्वाअनुराग[1] वर्नन

दोहा– पिय प्यारी दरसै जहाँ, चितकी लागै लाग ।
देषै विन दुष दहत[2] पुनि, सो पूर्वाअनुराग ।। २४६

अथ श्रीराधिकाकौ पूर्वाअनुराग

यथा– कुडल छटन बनमाल उछटन[3] वै,
मुकट पलटन छूटी लटन[4] सुधारिगौ ।
भाल - भृकुटनि वरुनीनकी कटनि छिन,
छिनकी छटनि नैन - सैननिमै सारिगौ ।
चदन लिलाट मुष मुरलीकै थाट भटू,
भैटन[5] भिटाय एहो मोहनीसी डारिगौ ।
पीत - पटवारौ जमुनाके तटवारौ वही,
बसीबटवारौ बटपारौ पाटपारिगौ[6] ।। २५०

अथ श्रीकृष्णकौ पूर्वा-अनुराग

यथा–काजरकै परसान चढी, यौ भढी अभिलाष सनेह नवीनौ ।
पषनिसी[7] पल पषनिसौ, जे उभकनिकै चित चाइ[8] प्रवीनौ ।।
की जबरी नफरी[9] सफरी, उन देषत ही मन मोलकै लीनौ ।
मैन-मढीसी गडी हिय आय, बडी-बडी आषै बडौ दुष दीनौ ।। २५१
दोहा– इहि पूर्वा - अनुरागतै, दसौ औस्था[10] आय ।
ते अब बर्नौ कर्मतै, सुनौ[11] सबै कबिराय[12] ।। २५२

अथ दस-अवस्था नाव[13] कथन

दोहा– अभिलाष सु चिंता गुन कथन, स्मृति उद्वेग प्रलाप ।
उन्माद, व्याधि, जडता रु भय, होत जु मिलन प्रताप ।। २५३

---

२४६ १ ख पूर्वाणुराग । ग. जौरि । २ ख दहन । ग.
२५०. ३ ख उछतन । ४ ख. लटनि । ५ ख भेटति । ६ ख वाटपारिगो ।
२५१. ७ ख पखन । ८ ख चाहो । ९ ख तफरी ।
२५२ १० ख ओसथा । ११ ख सुतो । १२ ख कविराई ।
२५३ १३ ख नाभ ।

तहा प्रथमअभिलाष[1]-लक्षन

दोहा– मिली रहै गतिमति[2] जहा, जातिहू पहले जाइ[3] ।
अब सरीर मिलिबौ चहै, सो अभिलाष कहाइ ॥ २५४

अथ श्रीराधिकाकौ अभिलाष

यथा– सोभा - सिंधु पारुनमै[4] माधुरी अपारनमै ,
चदके प्रहासन[5] उजासन धिरत[6] है ।
भौहनकी भगै छूटि अलकै - भुजगै मद ,
हासन - तरगनकी सग न भिरत है ।
देषे बिन जेरी निस - द्यौस उरझेरी नद-
नदनकै देषे बिन आली न सरत है ।
तिरि तिरि तेरू भये जोगीलौ जगेरू लागे ,
मेरे नैन हेरूए पषेरूलौं फिरत है ॥ २५५

अथ श्रीकृष्णकौ अभिलाष

यथा–अबर धारै[7] निलबरसौ, बडे नैननि सुछ-सरोज[8] निगाहै ।
बैन[9] सुधासे सुधाधरसो मुष, देषी वा एक[10]या कुजकी राहै ॥
चाहै मिल्यौ अब ही उनसौ, सब जे मति जे गति कीनी बिदा है ।
ता दिनतै लागी वैही अथाचित, वैही मन वैही बिथा है ॥ २५६

अथ चितालक्षन

दोहा– कैसेके मिलिए मिलै, हरि[11] कैसे बस होइ ।
यह चिता चित मित्रकी, बरनत हैं सब कोइ[12] ॥ २५७

अथ श्रीराधिकाकी चिता

यथा– जत्र अनुराग सौच[13] तात्रन सकोच मत्र ,
मृदु मुसकावनिकै सोभा सरसै रहे ।
भौह - वरुनीन साज चितवनि चौककरि ,
अग - अग न्यारे करि अगनकौ ले रहे ।

---

२५४ १ ख अभिलाषा । २ ख अति मति । ३ ख पहुँले जाई ।
२५५ ४ ख न पाटन । ५ ख प्रहारन । ६ ख घिरत ।
२५६ ७ ख धार । ८ सुच्छ-सरोज । ९ वेनु । ग बैन । १० ख. यैक ।
२५७. ११ ख हर । १२ ख. कोय ।
२५८ १३ ग सोच ।

गूढ गति केती औ अगूढ गति केती छिन ,
छिनकी छलावनिसौ छाय उरझै रहे ।
वृंदावनचंद - छबि देषत तिहारी नैन ,
वा तियके भगलके वाजीगर ह्वै[1] रहे ॥ २५८

अथ श्रीकृष्णकी चिंता

यथा– चिंतामनि चितबृत्ति रहे चाय भाय छबि ,
छीर गहराई नीर - गति सरसै रहे ।
तारे बिष-अमल[2] सतारे बिसतारे लषि ,
सुरा पुतरीन नीसनारे छक छै रहे ।
सुधा मद - हासी वरसाय सरसाय छबि ,
लछि लाइ रूपबस जंत्र बिरझै रहे ।
चंदमुषी ए री मुपचंद लषै तेरो नैन ,
बृंदाबनचंद्रके समुद्र सम ह्वै रहे ॥ २५९

अथ गुनकथन-लक्षन

दोहा– जंह गुन-गन गन देह-दुति[3], बरनहु सहित असेष ।
ता कहु जानहु गुन - कथन, मनमथ - मंत्र विसेष ॥ २६०

अथ श्रीराधिकाकौ गुनकथन

यथा–कंचन जौ जडता तजि देय तौ, अंगके रूपसौ रूप दिषावै ।
षंजन मीन सुवा पिक तिर्जक[4], बिद्रुम[5] जाति कुजाति लहावै ॥
राधिकाके अंग नीके हौं बानिक, जान कहै उपमान न आवै ।
चंद कलंक बिना जन होइ तौ, तौ मुषच्चंद समान कहावै ॥ २६१

अथ श्रीकृष्णकौ गुन-कथन

यथा–मंडि[6] सुधानिकी धार चकोरनि, भौरनि नेहलता बरसावै ।
षेद तजै भ्रमबेके[7] बिभेदकौ, रैनि उदैके प्रभावहि आवै ॥

---

२५८ १ ख है ।
२५९ २ ख विस-अमल ।
२६०. ३ ग देहु-दुति ।
२६१ ४ ख तिर्यक । ५ ख बिंदुम ।
२६२ ६ ख मुंडि । ग मंड । ७ भ्रमिवेके ।

ताप तजै सजै आंनद आषिन, ज्यौ मृदु-भाषनि[1] साषि वतावै ।
चदमुषी बृजचदके अगकी, सूरज तौ समता कहु पावै ।। २६२

अथ श्रीस्मृति-लक्षन

दोहा– औरे[2] कछू सुहाइ तह, भूलि जाय सब काम ।
मन मिलिबेकी कामना, ताकौ सुमृति[3] नाम ।। २६३

अथ श्रीराधिकाकी स्मृति

यथा–काहूसौ बात कहै न सुनै, कछु षेलै नही छिन मदिर माहा ।
लागै नही मनहू किहिं ठौर, सु औरसे लागत घाम रु छाही ।।
भूषन दूषनसे पहरै, सो उतारि धरै यो उठै सतराही ।
भोजन भाति सुहात न भाति सो, काल्हिसी राधिका आजु तौ नाही।।२६४

अथ श्रीकृष्णकी स्मृति

यथा–आपही जाय लगी कितकौ, दिन देह-दसा उर भाति न आंनै ।
साथ सषा पर चैन रुचै, औरै बातनके न बितान बितानै ।।
नीद न भूष न काल्हिहीतै, कछू नाही हितूनिहूकौ मन मानै ।
दैन लगी दुषकौ दुषिया, अषियानकी[4] वै अषियां नहि जानै ।। २६५

अथ उद्वेगलक्षन

दोहा– षिन रोवै हुलसै हसै, उठि चालै उभकाय ।
जित-तित देषि चिते रहै[5], सो उद्वेग कहाय ।। २६६

अथ श्रीराधिकाकौ उद्वेग

यथा–चक्रतसी उभकीसी जकीसी, थकी बतियानसी आनत जीसै ।
पीरै भई[6] अग हेरै नही, सग औरकी और कहै करि रीसै ।।
कीजे कहा उपचार बिचार[7], निहारिकै हारि रहे बिसै बीसै ।
औरै भई ढग जानी परै नही, आजु नही रग राधिका दीसै ।। २६७

---

२६२ १ ख भावन ।
२६३. २ ग औरै । ३ ग स्मृति ।
२६५ ४ ख अखियानकी ।
२६६ ५ ख चितते रहै । ग चितै रहै ।
२६७. ६ ख ग पीर भई । ७ ख विचारि ।

अथ श्रीकृष्णकौ उद्वेग

यथा–लागै न वयौहू न बातनमै, मन आगन पौरिन मंदिर माही ।
चक्रतसे[1] चित चौंकि रहै, उठि चालैं कहू बरजै बिरझाही ॥
एकटगी[2] टगसी जक लागीसी, आषै रही बस मत्रन गाही ।
कीजै कहा गति कैसी भई, मति आजु कछू हरिकौ सुधि नाही ॥ २६८

अथ प्रलापलक्षन

दोहा– थिर न रहत कहु[3] गैर मन[4], अति अताप तन-ताप ।
कहै कछू बोलै कछू, कहि तासौ परलाप[5] ॥ २६९

अथ श्रीराधिकाकौ प्रलाप

यथा–करि साज संगीत सषी सुष-हेत, सु तो दुष देत अपूठी झुकीसी ।
भाय[6] मनायकै सेवा करै, दिन ही दिन देवता जानो[7] बकीसी[8] ॥
जाय कहां करै को उपचार, सहाय करै मति होत रुकीसी ।
सारी सषीन रही ज्यौ जकीसी, ह्वै राधिके आजु कछू उझकीसी ॥ २७०

अथ श्रीकृष्णकौ प्रलाप

यथा--बोलै कछु उठि बोलै[9] कछू, दिल षोलै नही गिनै घाम न छाही ।
लागै नही पल नीद न भूष न, जानिये कौन दसा मन माही ॥
टौनाके टूमेसे लागै भटू, सुनि तू लषि री गहिकै बलि बाही ।
कै कितहू परछाही परी, नंदनंदन आजु अकेलेसे नाही ॥ २७१

अथ उन्मादलक्षन

दोहा– बन - उपवन उद्दीप जे, चित - मति यौ दरसाय ।
सुष सब दुष ह्वै जात जह, सो उन्माद कहाय ॥ २७२

अथ श्रीराधिकाकौं उन्माद

यथा– सुधासौ छकीसी बकी नेहसौ जकीसी रहै ,
सोभासौ झषीसी उझकीसी नई नीकी है ।

---

२६८ १ ख चक्रितसे । २ ख येकटगी ।
२६९ ३ ख कहू । ४ ख ग ठौर मन । ५ ख प्रलाप ।
२७० ६ ख माय । ७ ख दिन देवता जानि । ८ ख थकी सी ।
२७१ ९ ख उठि डोलै ।

अलकै जजाल जटा - जाल त्यौ सुरष डौरे ,
भगवा बिसाल लाल अबर नजीकी है ।
औरसौ न बोलै जिय षेलमै न षोलै रहि ,
बातै बरजीसी चितमति बरजीकी है ।
षजनसौ तीषी है सरोजनि सरीकी[षी] लसै ,
आली तेरी आषै किन सिद्धनसौ सीषी है ॥ २७३

अथ श्रीकृष्णकौ उन्माद

यथा--नाही कलक किये मुष करौसो[1], पापनकी अवली उमही है ।
नाहो सितबर कोढी कुढग, 'बियोगन-श्रापन देह दही है'[2] ॥
छीन भयेहू लये[3] षलता, अरी देषि सो याकी ए रीति नई है ।
छदसौ ए नहिं सोहैं अमदसो, चद नही यह राह सही[4] है ॥ २७४

अथ व्याधिलक्षन

दोहा-- प्रीति लगैं मिलिबो नही, प्रगटै ताकी पीर ।
तब बिबरन ह्वै जात जति, उपजति ब्याधि सरीर[5] ॥ २७५

अथ श्रीराधिकाकी व्याधि

यथा-- आजु बेसम्हार बलि बिरह बिसालनसौ ,
ल्याये परजक पर आंगनमै[6] आरसे ।
छूटि रहे केस लक लबढि - लबढि बाहै ,
फैली गौरै रग उर अलकै विहारसे ।
छकी छबि देपि मति रति ना रती न गति ,
रंभाहू न अति रहे ऊपमके[7] भारसे ।
चद्रिका सी चेरी रहो चकई सी चौकि रह्यौ[8] ,
चाकरसौ चद्रमा चकोर चौकीदारसे ॥ २७६

---

२७४ १ ख तेरौसो। २ ख तैसी वियोगनि देह देही है। ३ ख लखें।
४ ख सई।

२७५ ५ ख शरीर।

२७६. ६ ख अकनमें। ७ ख उपमाके। ग उपमके वहारसे। ८ ख रही।

अथ श्रीकृष्णकी व्याधि

यथा— देहकी सकल सुधि ग्वालनकी सुधि भूलै ,
देषै तन छबि आषै आवत है आसु री ।
बसन - असन छिन - छिनमै अभाये लागै ,
चद्रिका चितासी रु बिछौनां भये डासु री ।
हरि साम्है[1] हेरि नैन[2] देषि-देषि लागै दुष ,
भरि गयौ[3] होयौ गरि गयौ तन - मासु री ।
'कहू बनमाल नदलाल कहू पीतांबर[4]' ,
कहू मोर - मुकट कहूक परी बासुरी ॥ २७७

अथ जडतालक्षन

दोहा— सुप दुप होत समान सह, भूलि जात सुधि अग ।
गति - मति देत बिसारिकै, जडताकौ यह रग ॥ २७८

अथ श्रीराधिकाकी[5] जडता

यथा—लागि रही तालो चढी भृकुटी बिसाल अलकनि[6] ,
जटाजाल छूटी छबिता अछेह है ।
आसपास सपिया जमाति जग्यासी समाज ,
चदन भसम लसै उपमाके मेह है ।
अैसी गति भईसी गईसी क्यौ रहीसी सुधि ,
जात न कहीसी यौ बहीसी रही देह है ।
निसि - दिन साधे बृजचदके अराधेकौ सौ ,
सिवकी समाधि कैधौ राधेकौ सनेह है ॥ २७९

अथ श्रीकृष्णकी जड़ता

यथा—छूटे त्यौ बार जटाजूटी-जाल, बिभूतिसो चंदनके बरकीसी ।
ओलै नही पल षोलै नही षुलै, भाल चढी भृकुटी भरकीसी ॥
जानै को कौनै किये यन हाल, लसै उपमा ज्यौ सुधा झरकीसी ।
आधे भये नदनदन आजुसौ, साधै समाधि दिगंबरकीसी ॥ २८०

---

२७७ १ ख. सार्मे । २ ख हेरि नेक । ३ ख वरि गयो । ४ ख कहूं नदलाल बनमाल क प्रीतपट ।

२७९ ५ ग राधिकाकी । ६ ग अलकिनि ।

अथ करुणां विरहलक्षन

दोहा– सुष उपाइ छूटत सबै, उर आकुलता मानि ।
होत जहा करुना बिरह, दपतिकै उर आनि ।। २८१

अथ श्रीराधिकाकौ करुनाबिरह

यथा–केतौ सिषाइकै मै[1] पठई, नफरी अजौ कौनकै सग लगी है ।
आपनी-आपनी चाढ महा, नहि जानत हौ[2] मति मोसौ भगी है ।।
आपकी आप कहै न बनै, कोऊ जानै कहा परपीर जगी है ।
कै कोई और जगी हियमै, कै भई सषि सौतिनहीकी सगी है ।। २८२

अथ श्रीकृष्णकौ करुनांविरह

यथा–जाय मिली उत आप नही, अभिलाषनि साथ महा अनुरागी ।
कौंनसौ या कहिए[3] सुनिए, सुनि रैनि-दिना अति ही उरझागी ।।
ए इनकी लषि रीति नई, सो कही हू न जात जिती मन आगी ।
देषै बिनां दुष देन महा[4], अषिया फिरि मेरी ए मोहीसौ लागी ।। २८३

अथ प्रवासलक्षन

दोहा– गवन करत प्रीतम-प्रिया, बिछरि कौनहू[5] काज ।
ताहि प्रवास बषानिकै[6], कहत सबै कबिराज ।। २८४

अथ श्रीराधिकाकौ प्रवासबिरह

यथा–जा दिनतै बिछुरे नदनदन, ता दिनतै कछु नीति न नैगौ ।
दीन भयौ दिनही-दिनपै, रैनि आवत ही दूनौ देषि नसैगौ ।।
मोहि भरोसौ इते पर हौ, सुनही उनहूकै वियोग वसैगौ ।
जानतही पियकै बिछुरै, हिय काचकी चूरि लौ टूक ह्वै जैगौ ।। २८५

अथ श्रीकृष्णकौ प्रवास-बिरह

यथा–देषै बिना उनकै कबहू, न[7] रहे न जुदे छिनहू रतिया है ।
मोहि भरौसौ न हौ इतनौ[8], इनहू फिरि कौन गही गतिया है ।।
आवत एक[9] अचभौ यहै, सुनि री चित दै करिए बतिया है ।
वा बिछुरैतै न फूटि अहूटि, न टूटि छटूक भई छतिया है ।। २८६

---

२८२ १ ख में । २ ख महि जानत हो ।
२८३. ३ ख कहियें । ४ ख दुख देत महा ।
२८४ ५ ग कौनहु । ६ ग बषान ।
२८६ ७ ख कवहू फिर कौन । ८ ख इतनें । ९ ख येंक ।

दोहा– या प्रवासमै होत है, भय - भ्रम निद्रा आनि ।
पुनि पत्री द्वै भाति सुनि, बाक्य लिखन मन मानि ॥ २८७

अथ भय-भ्रमलक्षन

दोहा– जहं प्रवासके बिरहतें, उपजत है भय - भ्रम ।
तासौ भय भ्रम कहत है, सब कबि मन-बच-क्रम ॥ २८८

अथ श्रीराधिकाकौ भय-भ्रम

यथा–सीस नछित्रन[1] माग बनाय, दिये ससि टीकासो भाल जताईं ।
बोलकै बोली उलूकनि त्यौ, दसहू दिस चीर दसा दरसाईं ॥
सग सषीन चुंरैलनिसौ, घन ज्यौ तम छूटिकै केसनि छाईं ।
तू सुनि री बृजचद बिना, अलि राकिसी तैसी निसा फिरि आईं ॥ २८९

अथ श्रीकृष्णकौ भय-भ्रम

यथा–कठ[2] षद्यौतनके गहनां, बनि अबर नील - घटा घहराईं ।
त्यौ चपला चमकै अति हाससो, केस षुले धुरवा छबि छाईं ॥
बोलत बोल मयूरनकै मिस, दादरकै बिछियांन बनाईं ।
चंदमुषी बिन तू सुनि री, निस फेरि चुरेलिनि ज्यौ चलि आईं ॥ २९०

अथ निद्रालक्षन

दोहा– अति बिरहै[3] परवासतैं, निद्रा आवत[4] नाहि ।
तासौ निद्रा सबै कबि[5], समझि लेहु मन मांहि ॥ २९१

अथ श्रीराधिकाकी निद्रा

यथा–मोहनकौ दुष दीनौ सदा ही, इही दुषदायक दूनी दुषाईं ।
जो चरचा इनकी जु सुनी, सु अबै वह आपसौ जानिही पाईं ॥
दाव बन्यौ सु करै न कहा, तकि मौंसर कौ उन संग सिधाईं ।
नेह नए[6] इन नैननिकौ, बिछरै निस नाहकै नीद न आईं ॥ २९२

---

२८९. १ ग नछित्र ।

२९० २ ख कच ।

२९१. ३ ख विरह । ४ ख ग आवति । ५ ख कहत कवि ।

२९२. ६ ख. नेह नयो ।

अथ श्रीकृष्णकी निद्रा

यथा–वा तियके बिछुरै बिछरी[1], सु किये उपचारनहू फिरि आगी ।
आयेतै[2] आय[3] है लार लगी, उमगी अग-अग षरो अनुरागी ॥
आवनद्यौ नहि मैहू अबे, रसमै रत ह्वै निस-वासर जागी ।
लागै नही पलहू पलकै, नैना नीद[4] गई उनकै सग लागी ॥२९३

अथ पत्रीवर्नन

दोहा– पत्री दोइ[5] प्रकारकी, बरनत है कबिराज ।
एक लिपन इन बाकि पुनि[6] तिनके सुनौ समाज ॥ २९४

अथ लिषनपत्रीलक्षन

दोहा– बिरह-बिकल अकुलाइकै, लिषि पठवत[7] कछु बात ।
लिषन पत्रिका ताहि सब, कबिकुल बरनत जात ॥ २९५

अथ श्रीराधिकाकी लिषन पत्रिका

यथा– लिषन सकत तातै उतही पठाई आयौ ,
ह्वैहै रितुराज नेहआचतै न आचियौ ।
देषि-देषि अलि अषरानकी[8] अवलि मेरे ,
बिरह - अदेसेके सदेसं चित साचियौ ।
कोकिला[9] कासीद मुष-बचन कहै सो मानि[10] ,
पौन डाक[11] चौकीदार चाकरी न राचियौ ।
राती अनुरागको सुहाती फूल - छापनि ,
धपाती नव - पत्रनकी पाती लाल बाचियौ ॥ २९६

अथ श्रीकृष्णकी लिषनपत्रिका

यथा– केता करि लिष्या फेरि जादा करि लिष्या जात ,
मिलना न औधिपै बिसारौ मति मन है ।
ज्यौ-ज्यौ यादि आवै वैही वातै फिरि यादि करि ,
देषना न औरका सुहावै कछू तन है ।

---

२९३ १ ख विछुरी। ग विछुरै। २ ख आयतें। ३ ख आई। ४ ग नींद।
२९४. ५ ख दोय। ६ ख वाक्य पुनि।
२९५. ७ क. यठवत।
२९६ ८ ख अषरानिकी। ९ ग कौकिला। १० ग मान। ११ ग डांक।

सोई सुभ घरी सुभ दिन सुभ छिन सोई ,
रावरै दरस लागी आवै एकपन है ।
कहना न जात कछु कह्या इस हालका सो ,
साची प्रीति जालिम जवालिका सदन है ॥ २९७

अथ वाक्य-पत्री[1] लक्षन

दोहा– कहि पठवै मुषबचन कछु, बिरह बिकलता होइ ।
बाकि - पत्रिका कहत है, तासौ सब कबि लोइ ॥ २९८

अथ श्रीराधिकाकी वाक्य-पत्रिका

यथा– फूले सर कवल तडाग उडि मिले भौर ,
ह्वै चहु ओर चौर भौर[2] झुकि रहिये ।
गालिब गुलाब चपा भौरै है रसाल तर ,
कचन चबेलिनकी चगुली न चाहिये ।
उज्जल अवासनकी भासै चादिनी उजासै ,
देषि - देषि जासै दिन - दिन न निबाहिये ।
विरह - अदेसौ आषै देषि जाय तैसौ सुनि ,
पथी बीर[3] इतनौं सदेसौ जाय कहिये ॥ २९९

अथ श्रीकृष्णकी वाक्य-पत्रिका

यथा– यौही बरसावन सु आयै[4] बर सावनकौ ,
नेह सरसावन बिरह तन तैसौ है ।
मोर[5] मिलि गावन पपीहै परचावन पै ,
नाही पर-चावन समाज जिय अैसौ है ।
आवनकै मग अैसी धारी बृत[6] लोचनन ,
ज्यौ चकोर चदबृत धारनकौ जैसौ है ।
आवन अदेसेकौ सदेसौ लिषियौ न अजौं ,
कहियौ हमारौ यौ अदेसेकौ[7] सदेसौ है ॥ ३००

---

२९८ १ ख बाक्य पत्रीका । टि –छन्द सख्या २९८ [ख] प्रतिमें नहीं है ।
२९९ २ ख. ह्वं ह्वं चहूं ओर ठोर भोर । ३ ख वार ।
३०० ४ ख आयो । ग आयौ । ५ ग मौर । ६ ख धारी व्रत ।
७ ग अदेसे षयौ ।

दोहा– बिछरत[1] प्रीतम - प्रिया जह, बिप्रलभ-सिंगार ।
बरन्यौ च्यारि प्रकार यौ, करिकै बहु बिस्तार ।। ३०१

दोहा– मान पूर्ब-अनुराग पुनि, करुना बहुरि परवास[2] ।
कहे जथामति बरनिकै, बुधि-बल कछुक प्रकास ।। ३०२

इति श्रीनेहतरगे रावराजा श्रीबुद्धसिंह सुरचते प्रवास–
विरह निरूपणनाम अष्टमो तरग

★

अथ भाववर्नन

दोहा– रस सो ब्रह्मस्वरूप है, कहत सबै कबिराव ।
प्र[पु]नि प्रगटत है भावतै, तातै बरनौ भाव ।। ३०३

अथ भावलक्षन

दोहा– मिलि दपतिकी प्रीति जो, प्रगटत अषिया आय ।
ताहीसौं सब कहत है, भाव कबिनके राय ।। ३०४

अथ भावनाम

दोहा– पाच भातिके भाव है, सुनि बिभाव अनुभाव ।
थाईभाव[3] र[4] सात्विकी, अरु सचारी - भाव ।। ३०५

अथ विभाव लक्षन

दोहा– जिनकै जिनते[5] प्रगट ह्वै, मैन बढावत प्रीति ।
आलवन उदीप करि, सो बिभाव द्वै रीति ।। ३०६

अथ आलवन उद्दीपनवनन

यथा– प्यारी पिय वृजचद सकल, आनदकद अलि ।
कोकिल-कुल कल-कुहक कुज, कुजनि गुजत अलि ।।
सरद - चद दीपति अमद - छवि, छद - छद सुप ।
सौरभ - सुमन - समाज सेज, सगित गुन - गन सुप ।।

---

३०१ १ ख विछुरत ।
३०२ २ ख प्रवास ।
३०५ ३ ख स्याई भाव । ४ ख रु ।
३०६ ५ ग जितनै ।

कलहास बास उजास ग्रिह, बिबिधि बास सुषनिधि धरनि ।
सपति समाज सब रितुनके, 'आलबन दीपन बरनि[1]' ॥ ३०७

अथ अनुभावलक्षन[2]

दोहा– आलबन उदोपकै, पीछे उपजत जात ।
सो अनुभाउ[3] बषानिऐ, प्रीतम हित अधिकात ॥ ३०८

अथ अनुभावनाम

दोहा– देपनि बोलनि चलनि हित[4], चुबन औ परिरभ ।
इत्यादिक अनुभाव है, बरनहु करि आरभ ॥ ३०९

अथ स्थाईभावकथन

दोहा– रति थाई सिंगारमै, रहत हासिमै हासि ।
करुणाकै बिचि सोक है, रौद्रहि क्रोध बिकासि ॥ ३१०

दोहा– बीर बीच उतसाह है, भयहि भयानक बास ।
बिभछा मधि निदा बसय, बिसमय[5] अदभुत यास ॥ ३११

दोहा– नऊ सात रस तास मधि, थाई है निरबेद[6] ।
सो सरूप सब बरनमै, सब जन[7] माझ अभेद ॥ ३१२

अथ सात्विक-भावकथन

दोहा– स्वेद रोम सुरभग कहि, 'कप बिबर्नहि जानि[8] ।
आसू प्रलय स्थभ ए, सात्विक - भाव बषानि ॥ ३१३

अथ सचारी-भावलक्षन

दोहा– सागर माझ तरग ज्यौ, सबै रसनिमै होत ।
ते सचारी जानिए, जिनकी बुद्धि उदोत ॥ ३१४

अथ सचारी-भावनाम

यथा– निर्बेद, गलानि, सका, आलस, दय, निमोह ,
श्रम, मद, कोह, मति, सुमृति, बषानिये ।

---

३०७ १ ख उद्दीपन आलब बरनि ।
३०८. २ ख अनुभाव लक्षित । ३ ख अनुभाव ।
३०९ ४ ग चित । टि०—छन्द सख्या ३०९ ख. प्रतिमें अपूर्ण है ।
३११ ५ ख विस्मय ।
३१२. ६ ख निर्वेद । ७ ख सव जग ।
३१३ ८ पकहि बर्नहि जानि ।

व्रीडा, धृति, नीद, निदा, जडता, बिपाद, चिता ,
उतकठा, ग्राबेग, चपलता, प्रमानिये ।
सुपन, प्रबोध, व्याधि, उग्रता रु उनमाद ,
श्रक, त्रास, भय, गर्व, हर्ष, उर ग्रानिये ।
मरन, ग्रपसमार, सहित संचारी - भाव ,
तेतीस सुकबि एई नीकें पहिचानिये ।। ३१५

दोहा– 'यनि भायनि[1]' मिलि होत है, रस-सिगार ग्रनियास ।
ता सिगार करि करत है, तेरे हाव प्रकास ।। ३१६

ग्रथ हावनाम

दोहा– हेला लीला मद बिहृति, किलिकिंचित बिव्वोक ।
मोटायत बिभ्रम ललित, कुटमित परगट लोक ।। ३१७

दोहा– बोधक बहुरि बिलास भनि, बिछित्यादिक हाव ।
तिनके लक्षन लक्ष ग्रब, सुनौ सबै कबिराव ।। ३१८

ग्रथ हावलक्षन

दोहा– नैंक न लाज समाजकी, महा मानियत कानि ।
लसत जहा पीतम प्रिया, हेला - हाव सुजानि ।। ३१९

ग्रथ श्रीराधिकाकी हेला-हाव

यथा– नैंननि ग्रजनकैं धरिबै, धिरबै भृंकुटीनकी जूटैं निकाई ।
छूटिबै पीठिपैं बारकैं भारनि[2], भौर-कतारनकी छबि छाई ।।
ग्रावन कुजनकैं प्रति-कुजन, केसरि-पौरि-प्रभा गगराई ।
राधे सुनौ कछु काल्हिहीतैं, जु लए इनि[3] बातनि मोल[4] कन्हाई ।। ३२०

ग्रथ श्रीकृष्णको हेला-हाव

यथा– ग्रगके रगसौं[5] हासी - प्रसगसौं, भौहके भगनते छवि छायौ ।
कैंऊ उपगनके ढगसौं, दुनि देपन केसरसौं सरसायौ ।।

---

३१६. १ ख इनि भाईंन ।
३२० २ ख. भारन । ३ ग इन । ४ ख मोलि ।
३२१ ५ ख रगसे ।

राकाकी आजु निसा मिलि आय, लयौ[1] केते भायनसौ[2] परसायौ ।
नदके नदनकौ बिनि मोल, गयौ मन हाथसौ हाथ न आयौ ॥ ३२१

अथ लीला-हावलक्षन

दोहा— पिय - प्यारी लीला करत, अपनै मनकै भाव ।
बहु भांतिन अभिलाषतै, बरनौ लीला - हाव ॥ ३२२

अथ श्रीराधिकाकौ लीला-हाव

यथा— तेरे बिन देषै तिन्है चैन कैसै होइ जिन ,
लोचन - चकोरन पियूष - रस चाष्यौ है ।
बोलिनिमै उझकि-उझकि[3] झांकि-झाकि जात ,
लाष भाति देपनकौ चित अभिलाष्यौ है ।
कबहूक चित्रमै बिचित्र आपुचित्र लिषै ,
पाय परि प्यारी मृदु - बैन मुष भाष्यौ है ।
आगनतै कुजनलौ कुजनतै आगनलौ ,
आगन औ कुज भौन एकै[4] करि राष्यौ है । ३२३

अथ श्रीकृष्णकै लीला-हाव

यथा—बाहरितै घरमै फिरि बाहरि,आतुरता अति ही उर झा[जा]गी ।
कुजनतै प्रति कुजनतै, सषा सगनतै मिलि षेलबै भागी ॥
औसै नई दिन च्यारिकतै, बिधि कैसै कही परै जात अघागी ।
एरी अली तेरे देषनकी, बृजचदकौ चाह चुरेल ह्वै लागी ॥ ३२४

अथ मद-हावलक्षन

दोहा— अधिकाई लहि प्रेमकी, उपजत हिये गुमान ।
सो मद - हाव बषानिये, जानहु सुकबि सुजान ॥ ३२५

अथ श्रीराधिकाकौ मद-हाव

यथा— साथ सषीनमै षेलिबे[5] कौन, मिलै मन भूलि रचै नहि कोई ।
फूलेसे गात लसै सरसात[6], सो लाज सबै लषि बेनकी षोई ॥

---

३२१ १ ख लखो। २ ख भार्यानसौं ।
३२३ ३ ख बेलिनमें उरझि-उरझि । ४ ख येकें ।
३२६ ५ ग षेलिबौ । ६ ख लसें सर साथ ।

जा दिनहीतैं मिली बृजचदतैं, भोजनकी सुधि जात न जोई ।
कोई हसौ भलि कोई रिसौ भलि, कोई कहौ कि मुनौ भलि कोई ।। ३२६

अथ श्रीकृष्णकौ मद-हाव

यथा–देषै न भेषै विसेषै कहू, अवरेषै लषै टगी एकमैं रापै ।
चौकै चकै भ्रमै भूलै सुभाव, सौ चाउ[1] उपाय करै यक[2] पाषै ।।
जानैहौ ग्रैसै ग्रबै[3] नदनदन, डोलत क्यौ वृजपै रज नाषै ।
रैनि जगी कछु आजुहीतैं[4], अषिया लगी दैन सनेहको साषै ।। ३२७

अथ बिहति-लक्षन[5]

दोहा– जाहि न बोलन देति है, लाज गहत[6] है आइ ।
बिहति-हाव सो बरनिए, वानिक बिबधि[7] वनाइ ।। ३२८

अथ श्रीराधिकाकौ बिहति-हाव

यथा–सौहै[8] किये न हसै सरसै, तरसै जु तऊ अभिलापनि ओरी ।
चौकति चक्रतसी चितहू, अगहू न अरै धरै लाज निहोरी ।।
कौलग वा वृजचदसौ वावरी, चायनकी भरि है ढग ढोरी ।
राधिकाकी अजहू लगतै, अषिया अपियानतै जात न जोरी ।। ३२९

अथ श्रीकृष्णकौ बिहति-हाव

यथा–आजु कछू नदनंदनसौ, बलि राधे उराहनै दैन भुकै है ।
केते अगूढ औ गूढ किने, कहिवे सुनिवेकौ कितेक वकै है ।।
यौ सकुचे सरसे दरसे, मिलि उप्पमताईसौ ग्रैसे जकै है ।
चदसौ ह्वै अरबिंद[9] मनौ, मुषचदकै साम्है न ह्वै न सकै है ।। ३३०

अथ किलिकिंचितलक्षन

दोहा– स्रम[10] अभिलाप सगर्व मिलि, क्रोध हरपकौ जानि ।
उपजत सग सदा तहा, किलिकिंचित[11] सो मानि ।। ३३१

अथ श्रीराधिकाकौ किलिकिंचित

यथा–देपि रहै हसिवौई करै, मिलिबेकौ अरै मन मोद वढावै ।
चौंकै चकै वकै बावरीसी, थिर ह्वै न रहै ढिग कौन पठावै ।।

---

३२७. १ ख चाव । २ ख इक । ३ ख कवै । ४ ख आजहीतैं । ग आजहीतैं
३२८ ५ ख विहत-लक्षन । ६ ख गहति है । ७ ख विविध ।
३२९ ८ ग मोहैं ।
३३० ९ ख अरविंद ।
३३१ १० ख थम । ११ ख किलकिंचित ।

आजु ए तेरे सुभाव अली, बृज बैद बिना भ्रम कौन कढावै ।
बानसे[1] नैन सरोजसे तानि, कमानसी भौहै उतारै चढावै ।। ३३२

अथ श्रीकृष्णको किलिकिंचित

यथा–चाहत है मिलिबौ कबहू, कबहू सजै अग सिगारनकै है ।
काहूसौ रीझि हसै रिसै काहूसौ, काहूकै सग जकै उझकै है ।।
ये बनि अैसे सुभाउ[2] अली, सबकी[3] मति देषतहो जु थकै है[4] ।
लागे रहै थिरहू न कहू, नैना आजु तौ सूधै न ह्वै न सकै है ।। ३३३

अथ बिब्बोक-लक्षिन

दोहा– नेह - रूप अभिमानसौ, तहां अनादर होइ[5] ।
उपजहै[6] इह हाव तह, कहि बिब्बोकहि सोइ ।। ३३४

अथ श्रीराधिकाको बिब्बोक-हाव[7]

यथा–एक समै बृषभानलली, चली कुजगलीनि अली सग लाये ।
ग्वालनके गनमै नदनदन, जानि कढे भुजमूल मिटाये ।।
नैन चढाय हिये अकुलायके, बैन कहे रिसके सतराये ।
बावरी कौन बकै दिनराति, न जात न[8] जाति सुभाव मिटाये ।। ३३५

अथ श्रीकृष्णको बिब्बोक-हाव

यथा–साजे सिंगार सषीनकी सगति, देषी हुती बृषभानदुलारी ।
लालन चित्त घनै ललचै, भुज-भेटनको बढि बांह पसारी ।।
नैनकी सैननि सक झुकी, उझकी कटु-बैन उचारत गारी ।
जानै कहा चतुराईकी जो, रसआषर गोरस-बेचनहारी ।। ३३६

अथ मोटायति-हाव-लक्षन

दोहा– भावनके सगसौ जहा, उपजत सात्विक भाव ।
ताहि छिपावन कीजिए, सो मोटायत हाव ।। ३३७

---

३३१ १ ग बानसैं ।

३३३ २ ख सुभाव । ३ ख. सचकी । ४ ख न होय सकै हैं ।

३३४ ५ ख होय । ६ ख उपजत है ।

३३५ ७ ख विधोक-हाव । ८ ख जाति न । ग जातनि ।

अथ श्रीराधिकाकी मोटायति-हाव

यथा—बैठी हुती गुरु लोगनमै, भये साझ लिये उपमान तटी है ।
रातिके भूषनसौ[1] हरि देषि, लजि गति[2]सात्वगकी[3] उपटी है ।।
चाहै छिपावनकौ छलसौ, छबि सो उरमै कहिबै बिछुटी है ।
चदसौ आनन ढापतही, नभ छूटिकै चदकला उछुटी है ।। ३३८

अथ श्रीकृष्णकी मोटायति

यथा—बैठे तहा गुरु लोग समाजमै, सोहै वनाव वनाय रणेसे ।
एक सषी तहा राधिकाकी, निकसी सुधि आयकै देपि तकेसे ।।
ता छिन ही भाव सात्विगसौ, सो छिपावन काज इलाजन केसे ।
छूटि छकेसे लपेसे लषे, उभकेसे वकेसे सकेसे जकेसे[4] ।। ३३९

अथ विभ्रम हावलक्षन

दोहा— करत[5] औरके और ठा, भूषन बसन बनाव ।
पिय देषनकी चाहसौ, सो सुनि बिभ्रम - हाव ।। ३४०

अथ श्रीराधिकाकी विभ्रम-हाव

यथा— नेवर जराऊ मनि जेहरी बिसरि दोऊ ,
पाइ अरबिंदनपै बादिनकौ धरिबौ ।
बाधे त्रिबलीन कसि हेरति हियेपै हार ,
हीय मनि किकनीकी भासनिकौ भरिबौ ।
जावक रगीले मृगसावक से नैन इहि ,
भावक अनौषे हरि तन - मन हरिवौ ।
काननिमै मुरलीकीताननि सुनतही सु ,
सीपी कहा काननमै काजरकौ करिबौ ।। ३४१

अथ श्रीकृष्णकी विभ्रम-हाव

यथा—एक समै वृषभानसुता, सु गई निज धामहि नदके नौती ।
बैठी हुती बनिकै बहु बानिकै[6], जानिक दीपकी ज्यौतिसौ जोती ।।

---

३३८. १ ख भूषनिसौ । २ ख लगी गति । ३ ख ग सात्विककी ।
३३९ ४ ख पगेसे ।
३४० ५ ख करन ।
३४१ ६ बांनिक ।

एतेमै देषि छके नंदनदन, चाहि रहे तिन्है अग जुन्हौती ।
बीरी दई कितहू बगराय, रहे भ्रम पाय चबाय चुनौती ॥ ३४२

अथ ललित-हावलक्षन

दोहा– देषनि बोलनि[1] चलनि हित, प्रगटत कांम-कलांनि[2] ।
मोदकलित अति रसबलित, ललित-हाव उर आनि ॥ ३४३

अथ श्रीराधिकाकौ ललित-हाव

यथा– बारनके[3] भार लगि लागे लक पार मिलि ,
चदमुष - आननपै अलकै सुहात है ।
कुज - भौन फिरत घिरत हेरि हसकुल ,
सोहै साथ सषिया समाज सरसात है ।
चीर जालदार ऐसै राजत कसूभै रग ,
ताकै पार गहरी गुराई अधिकात है ।
आसपास चचल चकोरनकी चौकी पर[4] ,
केऊ चारु चद्रमाकी चौकी चली जात है ॥ ३४४

अथ श्रीकृष्णकौ ललित-हाव

यथा– माथै मोरपछिकौ मुकटसो मयक - छवि ,
दबि गए तिमर बियोग - दुष - दद से ।
पीतावर सध्या समै अबरको उपमान ,
आसपास ग्वालगन उडगनबृद से ।
फूले फूल गोपिनके[5] बदन कुमद - बन ,
लोचन - चकोरनके ताप मिटे मद से ।
आनदके कद आजु सकल कला सहित ,
चदमुषी देषि बृजचद लसै चद से ॥ ३४५

अथ कुट्टमित-लक्षन[6]

दोहा– केलि कलहको केलिमै, जहा केलि अधिकाय ।
सोई बरन्यौ कुट्टमित, हाव सुनौ कबिराय ॥ ३४६

---

३४३ १ ख बोलीन । २ ख कामकलान ।

३४४ ३ ख बारनिके । ४ ख चोकि परें ।

३४५ ५ ख फूल फल गोपिनके । ६ ख कुट्टमित लछिन ।

टी –छन्द सख्या ३४६ क प्रतिमे नही है ।

अथ श्रीराधिकाकौ कुट्टमित-हाव

यथा—पहिले[1] तजि मान मनाय रही, परि पाय कितीक किये उपपाने ।
ऊतर हू न दियौ गहि मौन, सपी न लपी द्दग बोल न माने ।।
आपुहि जाइ[2] मिली वृजराजहि, लाज तजी हियसौ हित ठाने ।
पेमके पथकी बात सपी, सुनि पेमके पथ चले सोई जाने ।। ३४७

अथ श्रीकृष्णकौ कुट्टमित हाव

यथा—हौ पचि हारी मनावनकौ, न मनै तऊ ज्यौ हठसौ सवही है ।
आपुही जाय मिले नदनदन, मानकी वान दसा न दई है ।।
याकौ अचभौ कहा सजनी, जिनकी केती सापि[3] पुरान कही है ।
मेरी सौ मोसौ न जात कहो, नैना नेह लगेनकी रीति नई है ।। ३४८

अथ वोधक-हावलक्षन

दोहा—सैनहिसौ[4] समुझै जहा, प्रकट करै नहि प्रीति ।
रस-हुलास दूनौ वढै, यह वोधककी रीति ।। ३४९

अथ श्रीराधिकाकौ वोधक-हाव

यथा—बैठे हुते[5] गुरु-लोगनमै, नदनदन अग वनै छवि छाये ।
राधिकाके ढिगकी अलि आय, निहारिकै सैन[6] कछू सरसाये ।।
वोले बिना मुपसौ छविसौ, सो मिलापकौ अैसी दसा दरसाये ।
देपिकै वा रुपहीकौ जवै, फिरि फेरिकै नैन-सरोज[7] दिखाये ।। ३५०

अथ श्रीकृष्णकी वोधक-हाव

यथा—मदिर आपनै आलिन साथ, सौ वैठी हुती अति रातिकी जागी ।
आय सपी तहा नायककी, घनै नेहसौ अगनसौ अनुरागी ।।
सैनहीसौ रुप कुज बतायकै, राधिके ऊतर दैनकौ लागी ।
आननसौ कर लाय कछू, अलकै फिरि फैली सुधारन लागी ।। ३५१

३४७　१ ग पहले ।　२ ग जाय

३४८.　३ ग साप ।

३४९　४ सैननहीसौं ।

३५०　५ ख वैठी हुती । ग. वैठी हुते ।　६ ग सैन ।　७ ग मैन सरोज ।

अथ विलास-हाव-लक्षन

दोहा— नैननि - बैननि[1] सैन बिधि, उपजत हिये हुलास ।
जल - थल भूषित अग रुचि, बरनौ तहा बिलास ।। ३५२

अथ श्रीराधिकाकौ बिलास-हाव

यथा— लाष-लाष भाति अभिलाषनि गुरावै सोहैं ,
हासो चद्रहासै गाढ बाढ अभिलाष्यौ है ।
अलकनि नेजा नैन बान पलकै निषग ,
भौंहनि कमानै कढि चाप उर भाष्यौ है ।
साहससौ मत्री त्यौ मुसाहिब बदन - चद ,
सुभट उपगनकै ढग भरि नाष्यौ है ।
लागत न लाग कैहू सौतै अनमथ तेरौ ,
रूपगढ मानौ मनमथ सजि राष्यौ है ।। ३५३

अथ श्रीकृष्णकौ बिलास-हाव

यथा— देवनकी[2] नारि औ अदेवनि कुमारि तन ,
वारिबेकौ होत निरधार[3] छबि जेठी है ।
पन्नग बधूनके मनौरथ मिलायबेकौ[4] ,
जीति लीनी त्रिभुवन[5] उपमा इकैठी है ।
अैसी बिधि बरन असेष प्रभा अगनकी[6] ,
वेदन बिरचिहू बषानत अनैठी है ।
रावरे निहारबै बिसेष बृज लोगनमै[7] ,
जोगनि ह्वै केतिक बियोगनि ह्वै बैठी है ।। ३५४

अथ बिछति-हावलक्षन

दोहा— आभूषनकौ आदर न, होइ तहा मत आइ[8] ।
हाव इहै मनुहारिसौ, विंछित कहौं बनाइ[9] ।। ३५५

---

३५२ १ ख नैंननि खेंलननि ।
३५४ २ ख. दैवनिकी । ३ ख निरधारि । ४ ख मिलायवेकी । ५ क त्रिभुव ।
६ ख आगनकी । ७ ख ग वृज लोगनिमे ।
३५५ ८ ख. मति आय । ९ ख विंघित हाव कहाय ।

अथ श्रीराधिकाकौ बिछिति-हाव

कवित्त– उज्जल[1] अनूप आभा उझली परत चारु ,
चद्रिकातै चौगुनी सुधा - रसुधरी धरी ।
बोलनि हसनि मनमेलनि मिलन - बिधि[2] ,
छलनि छलावनिकै भाय अति ही भरी ।
अैसे रानी राधिकाके अमल उपग ढग[3] ,
उपमान उपजी बिरंचि मतिहू हरी ।
कौन रूप थाहै सो अथाहै सो सुथाहै अग ,
कबिन बृथाही यौही चदकी कथा करी ।। ३५६

अथ श्रीकृष्णकौ बिछिति-हाव

यथा–सार सबै जगके सुषदायक, लायक है जदुराय अकेले ।
मानिक हीर तजे मुकताफल, गुजके पुजनकौ गल मेले ।।
पाइके सौरभ पाइबेकौ सो, सुगधन ए बृजके रज भेले ।
लाष करोरनिको हते भूषन, ते सब मोर-पषौवनि पेले ।। ३५७

इति श्रीनेहतरगे रावराजा श्रीबुद्धसिंघ सुरचते भाव हाव
निरूपण नाम नवमो तरग

*

अथ अवर रस वर्नन

दोहा– रस सिगार बरन्यौ सबै, अब बरनत रस ठौर ।
जा क्रमसौ आगालगू[4], कहि आए कबि और ।। ३५८

अथ हास्य-रसलक्षन

दोहा– लोचन बचननितै कछू, उदै होत मन मोह ।
बुधिवत[5] कबिबर सकल, कहत हास्यरस सोह ।। ३५९

अथ हास्य-रसभेद

दोहा– मद हास्य जानहु प्रथम, अरु दूजौ कल-हास्य ।
होत तीसरौ हास्य अति[6], कहि चौथौ परिहास्य ।। ३६०

---

३५६. १ ख उज्वल । २ ख मिलनि विधि । ३ उपग छन्द ।
३५८ ४ ख आगेंलगू ।
३५९ ५ ग बुद्धिवत ।
३६०. ६ ख हास्य तिहि । ग हास्य रति ।

अथ मद-हास्यलक्षन

दोहा— प्रफुलित लोचन होत कछु, दसन बसन मुलकाय ।
फरकत तनक कपोल जुग, मद हास्य सरसाय ।। ३६१

अथ श्रीराधिकाकौ मद-हास्य

कवित्त— भोर पति सगते ससंक अक 'जोर आली'[1] ,
बैठी सषियन साथ छबि साथ टूटी है ।
छूटैं कल अलकैं बिछूटैं नैन स्यामताई ,
ओठ 'रदन-छद'[2] सौ 'सबैं जात लूटी है'[3] ।
ता छबि निहारि आपे 'हसी अनहसी हसी'[4] ,
हसिबेकौ भई ताकी उपमा यौ जूटी है ।
रविके उदैतैं मानौ सब वे सरोजनीसी ,
षुली अधषुली एकैं[5] षुलैं एकैं षूटी है ।। ३६२

अथ श्रीकृष्णकौ मदहास्य

यथा—आजु लसैं हरि राधिका सग, निकाई सबै जगकी गहरैसी ।
नाक बनावनकौ नथकौ, हसि हाथ दयौ गहि केस हरैसी ।।
ता छबिकौ लषिकैं सषिया, मन रीझि रही छबिता बहरैसी ।
चदहूके मुषतैं छहरैं, लहरैं मनु गग षुली नहरैसी ।। ३६३

अथ कल-हास्यलक्षन

दोहा— सुनियत धुनि गभीर कछु, प्रगटत दसन बिलास ।
प्रसन चित्त लषि होत है, वहै बरनि कल - हास ।। ३६४

अथ श्रीराधिकाकौ कल-हास्य

यथा—आजु लषी सषी साथसौ राधे, मै साधें सबैं रसकी तलकी है ।
छूटी लटी एक टूटी उरोज, सुमेरपै त्यौ असिता छलकी है ।।
सारे सराहत आपनहू, तकिकैं मुसकी उपमा भलकी है ।
होत उदैकैं प्रभान लौ चद्रिका, चदतैं 'छूटि कछू झलंकी है'[6] ।। ३६५

---

३६२ १ ख ग जोर प्यारी । २ ख रदन छब । ३ ख ग सबै जल लूटी हैं ।
४ ख. हसी अनहसी लसी । ५ ख येक ।

३६५ ६ ख छूटि कछू उझली है ।

अथ श्रीकृष्णकौ कल-हास्य

यथा—एक समै बलि राधिकानै, कुबिजाकौ प्रसग कह्यौ हितहूसै ।
बोलि हसी मिलि सग सषी, कछु जाहरकै हरि सग ज हूसै ॥
ता छिनकी उपमाइ 'निभाइ, रही'[1] मिलिकै उन आननहूसै ।
सोधि सबै बसुधाकी सुधा, उपटी मनु सोधि सुधाधरहूसै ॥ ३६६

अथ अति-हासलक्षन

दोहा— निकसत हसत निसक जह, होत सिथल सब अग ।
सो अति - हास बपानि तह, वदन[2] सुगध तरग ॥ ३६७

अथ श्रीराधिकाकौ अति हास

यथा—एक समै हरि राधिकासौ, समै प्रात लसै छबिता सरसी है ।
एक[3] सषी तहा सौतिकी आय, गुपालसौ बोलकै 'रोस गसी है'[4] ॥
अैसे प्रसगनिकौ लषिकै, मिलि सारी सकोचकौ देषि लसी है ।
एक सषी लषि रीझि हसी, एक आषै हसी एक बोल हसी है ॥ ३६८

अथ श्रीकृष्णकौ अति हास्य

यथा—आवत आजु लषे नदनदन, अग-प्रभानि[5] धरै जिषरी है[6] ।
ता छबि नैक निहारि भई, न वै कौन बधू ब्रजकी फिकरी है ॥
ना षिन राधेसौ बार बडी लौ हसै उपमा यह त्यौ[7] निषरी है ।
चदकी वै अध-अबरतै, छिति[8] छूटि मनौ किरनै बिषरी है[9] ॥ ३६९

अथ परिहासलक्षन

दोहा— हसै सषीजन सकल जह, रचि कोतिक करि रीति ।
ताहि कहत परिहास सब, सुकबि सबै करि प्रीति ॥ ३७०

अथ श्रीराधिकाकौ परिहास्य

यथा—नदनदनकै एक नारिनै होरीमै काजर-रेष लिलार कसी है ।
ता दिसकौ ब्रजकी जुवती, सबही मिलिकै हसिबेकौ लसी है ॥

---

३६६ १ ख न भाई रही ।
३७७ २ ग सुघन ।
३६८ ३ ख इक । ४ ख रोस गही है ।
३६९ ५ ख प्रभाति । ६ ख. ग. जुखरी है । ७ ख सो । ८ ख छत । ९ ख छूट कछू किरनें विखरी हैं ।

सोहै प्रसग या उपमतै, मन मेरेमै आयके यो सरसी है ।
'च्यारचौही'[1] ओरतै चदमुपी, 'मुपचदतै'[2] चद्रिकासी बरसी है ।। ३७१

अथ श्रीकृष्णको परिहास

यथा–आजु मिली ब्रजनारि सबै, होरि षेलकौ नदके द्वार थटे ज्यौ ।
सारी सषीन सबै एक ह्वै, नंदनद गहे सिमटी न हटे ज्यौ ।।
काहू गह्यौ कर काहू नै अवर, अैसै छुटे उपमान लुटे ज्यौ ।
घेरि घटानके बीचिहूसौ, चपलानकी[3] चौकीसौ चद छुटे ज्यौ ।। ३७२

अथ करुनारसबर्नन

दोहा– अपनै हितकौ अहित जह, सुनत सोच चित होय ।
उपजत करुना रस तहा, बरनत कबिबर सोय ।। ३७३

अथ श्रीराधिकाकौ करुनारस

यथा–'आये कहूतै'[4]री आय कछू, जाकी बसीकी गसी हियेसु भरी है ।
ता पर त्यौ बस मत्रसी हासी, निहारे परीतै परीतै परी है ।।
ता दिनतै सफरोकै सलूक, भई नफरी उपमा उघरी है ।
वै[5] छिन वै घरी देपि छके,'सु अजौ लग[6] वै' छिन 'वैई घरी है[7] ।। ३७४

अथ श्रीकृष्णको करुनारस

यथा–जा दिनतै लगे नैन तिहारे, सो ता दिनतै वे बिके तन त्यौ है ।
काहूकौ 'लांच दै[8]काहूकौ साच दै, काहूकौ आच दै जाच दै ज्यौ है ।।
अबु ज्यौ ओछै परी सफरी, नफरी भये त्यौ अकुलातसे यौ है ।
आजु कछू फिरि काल्हि कछू परसौतै कछू तरसौतै कछू है ।। ३७५

अथ रौद्ररसलक्षन

दोहा– उग्र देह अति कोपमय, रक्तबर्न सब[9] अग ।
ताहि रौद्ररस कहत है, सब कबि पाय[10] प्रसग ।। ३७६

---

३७१ १ ख च्यारही। २ ख मुखचद्रि ते।

३७२. ३ ग चपलानकी।

३७४ ४ ख आयेहू कहूते। ५ ख वे। ६ ख सु अजु लगि। ७ ख बेई घरी हैं।

३७५ ८ ख नाचयें।

३७५ ख ता दिनतें फिरि आजु कछु फिरि काल्हि कछु परसो ते कछू हैं

३७६ ९ ख रक्तबरन। १० ख पाइ।

अथ श्रीराधिकाकौ रौद्ररस

यथा–वामै कलक इहै निकलक, है निसिद्यौस निसा इह जो है ।
अग घटै वह बाढै इहै, रग सोहत है अलकै अवरोहै ॥
सीचत है बिषबेली वहे, इहै नदके नदनकौ मन मोहै ।
चदकौ क्यौ सम दीजे भटू, मुषचद तौ चदतें 'सौगुनौ सोहै'[1] ॥ ३७७

अथ श्रीकृष्णकौ रौद्ररस

यथा–न्हांन सबै जमुना जलकौ, ब्रजके नर नारी हिये उमगे हैं ।
राधिका-रूप रहे लथि रीझि, भए[2] अभिलाष अनेक रगे हैं ॥
ज्यौ गुरु लोग सकोचन सोच, सरोजनसे उपमान जगे हैं ।
अैसे लगे दहू ओरतें नेन, सो लाजके 'ना हीय लाज लगे हैं'[3] ॥ ३७८

अथ बीररसलक्षन

दोहा–गौरषख गभीर तन, अधिक उछाह उदार ।
ताहि बषानहु[4] बीररस, कबिबर करि निरधार ॥ ३७९

अथ श्रीराधिकाकौ बीररस

यथा–तारे सुभट्टन मोतिन - माल, बिचित्रत चीर धुजा फहराई ।
दीपति देह तुरग लसं, गजराजन साजत गौन निकाई ॥
हासी षुले चद्रहासै लसे, वर बब चकोर अवाज सुनाई ।
यौ ब्रजचद रिझावनकौ, चमू चद ज्यौ चदमुषी सजि आई ॥ ३८०

अथ श्रीकृष्णकौ बीररस

यथा–मोतिनहार नछित्रन फैलि, वियोगनि त्यौ तमकौ करसे हैं ।
सोहत पीतसे अबरसौ, लिये अबर साझ समै दरसे हैं ॥
ग्वालनिबृ द कमोदनिसे, 'षुलि आवत'[5] अगनिसौ सरसै हैं ।
चदमुषी तेरे नैन-चकोरनि[6], चद मनौ बृजचद लसे हैं ॥ ३८१

---

३७७ १ ख चोगुनो सो हैं। ग चौगुनौ सो है।

३७८. २ ख भई। ३ ख नाहीं इलाज लगे हैं।

३७९ ४ ख वखानिहुं।

३८१ ५ ख लिख आवत। ६ ख ग चकोर पे।

अथ भयरसलक्षन

दोहा– स्यामबरन दुति देहकी, अति भयमय दरसात ।
देषत सुनत संकात मन[1], सो भयरस सरसात । ३८२

अथ श्रीराधिकाकी भयरस

यथा– नांही बगुपाति यह कौडावलि देषियत ,
गरजत नाही बाजै साकरनि[2] झेले है ।
छूटि जटा चचला भसम धूम अगलेप ,
मोर-सोर-हांक मिलि कोइलन भेले है ।
अबर धनष नील बचन झरत बूद ,
बिरह-परब घेरे चातकनि चेले हैं ।
चहू ओर भेलें ए समीर झकझोले[3] आली ,
पावस न भेले ए मलगनके मेले है ॥ ३८३

अथ श्रीकृष्णको भयरस

यथा– उमडे अडारे[4] घन कारे ते अफारे भय -
भारे अधियारे धुरवारन सुजातकी ।
चातक अलापै पिक किन्नर झिगारै सुर ,
झिगरन झाई मिलि मोरनि जमातकी ।
गरजै घटाकी छबि छूटिनि छटाकी सुधि ,
आवत अटाकी दुति भूलत सुगातकी ।
ज्यौ-ज्यौ सुधि जात जात छिन-छिन राति जात ,
एक एक राति जात लाष-लाष रातकी ॥ ३८४

अथ विभत्सरसलक्षन

दोहा– नीलबरन विभतसरस, अति निंदामय देह ।
उदासीन चित होत है, देषत सुनत जु जेह ॥ ३८५

---

३८२ १ ख. ग सुकात मन ।

३८३ २ ख. साकरिनि । ३ ख इकडेलें ।

३८४ ४ ग आडारे ।

अथ श्रीराधिकाकौ बिभत्सरस

यथा—पावसकी मधि रैंनि समै, पग-पायल पन्नगकी उर भागो ।
अबर पक भरे गये भीजि, तऊ जियमै कछु सक न जागी[1] ।।
होत इही बिधितै जियबौ, चित चाय बिधाता करी अनुरागी ।
जानैगी जेही जे जिय आनैगी, जे अषिया अषियानसौ लागी ।। ३८६

अथ श्रीकृष्णकौ बिभत्सरस

यथा—भादवकी भयभारी निसा, न गिनी जलधार बिहार सनौषी ।
बेलनि ज्यौ लपटै घनै पन्नग, त्यौ मग पिडुरी[2] कटक भोषी ।।
सारे सबै ब्रजलोगनि[3] हाथ, तिहारे मिलापकै कारन सोषो[4] ।
कीजे कहा कहिये जु कहा, लगो आषिनकी यह रीति अनौषी ।। ३८७

अथ अद्भुत रस-लक्षन

दोहा—जाकै देषत सुनत होय, होत अचभौ आनि ।
पीतबरन दुति अगसौ, अद्भुतरसहि बषानि ।। ३८८

अथ श्रीराधिकाको अद्भुतरस

यथा—देबीकै देहुरै पूजत आजु, लषे बृजचद सुधा सरसाती ।
रीभि मिली अषिया अषिया, उरभाती लजाती न औरौ लषाती ।।
यौ दहु ओरनतै सुधि कुजकी, औसै चलो मिलिबेकौ[5] उडाती ।
चारेतै चौकि[6] त्रिषानकै[7] त्रास, पसारिकै पप[8] जुराफ ज्यौ जाती ।। ३८६

अथ श्रीकृष्णको अद्भुत रस

यथा—आजु मिले जमना-तटपै, नदनदन ज्यौ ब्रषभानकिसोरी ।
धाय मिली अषियाँ अषिया, सषियानकै साथ चपै करि चौरी ।।
ज्यौ अभिलाषनतै यक[9] साथ, ह्वै सैन[10] षुली मिलि कुजकी वोरी[11] ।
मजन हेत चली तकि ताल, मनौ उडि षजनकी जुग जोरी ।। ३६०

---

३८६ १ ख सक न लागी ।

३८७ २ ख प्युडुरी । ३ ख. बृजलोकनि । ४ ग. सौंषी ।

३८६ ५ ख मिलिवेकू । ६ ख ओरेतें चोकि । ७ ग त्रिषानकैं । ८ ख पज ।

३६०. ६ ख ईक । १० ख हसैं न । ११ ख कुंजकी चोरी ।

अथ समरसलक्षन

दोहा– सबतैं चित्त उदास ह्वै[1], एक माझ ह्वै लीन ।
तासौं समरस कहत है, कबि पडित परबीन[2] ।। ३९१

अथ श्रीराधिकाकौ समरस

यथा–बोलै न डोलै न षेलै हसै, वनि बैठी[3] लिये अग-अग उजेरे ।
पान न षाय न पानी पियै, तजे भूषन बास बिलास घनेरे ।।
जोगसौ साधि समाधिसी लाय[4], रही सु तौ आवति है मन मेरे ।
हेरैं बिना हरिकैं उनकैं, रह्यौ हेरिबौ औरनकौ हरि हेरे ।। ३९२

अथ श्रीकृष्णकौ समरस

यथा–चित्रके से लिषे[5] मित्र गवालनि, बालनि छाडिकैं भौन बसेरैं ।
भूले[6] सबै सुधि षानकी पानकी, भूषन भाय बिसारे घनेरैं ।।
औसैं रहे उघरीसी दसा, उघरी कैंधौ जोगदसाकैं उजेरैं ।
हेरी हुती तुव आवत जा दिन, ता दिनतैं हरि और न हेरैं ।। ३९३

इति श्रीकृष्णकौ समरस

इति श्रीनेहतरगे राउराजा श्रीबुद्धसिह सुरचते रसनिरूपण नाम दसमो तरंग

★

अथ च्यारिबृत्ति कबित्तकी बर्नन

दोहा– प्रथम बृत्ति कौसिकि[7] कहौ, बहुरि भारती देषि ।
आरभटी तीजी कहौ[8], चौथो सात्विकि[9] लेषि ।। ३९४

अथ कौसिकीलक्षन

दोहा– करुना हास्य सिंगार रस, अक्षिर[10] सरस बषानि ।
सुदर भाव समेत मिलि[12], बृत्ति कौसिकी जानि ।। ३९५

यथा–रैंनिकी लागी कपोलनि पीक, हिये अनुरागु[13] उतैं उघरचौ है ।
टूटि रहे उर हार लसै, सु सुहागसौ सौतिन चाढ भरचौ है ।।

---

३९१ १ ख. है । २ ख प्रवीन ।
३९२ ३ ख वाने बैठी । ४ ख समाधि मीलाय ।
३९३ ५ ख लिखि । ६ ख भूलि ।
३९४ ७ ख कोसिक । ८ ख कहू । ग कहु । ९ ख सात्विक ।
३९५ १० ख अक्षर । ११ ख समेति मिलि ।
३९६ १२ ख अनुरागु ।

तापर यौ सिर सोभा समाजसौ, उप्पमता यह गाढ करचौ है ।
प्रीति उदगलकौ ब्रजचदसौ, ज्यौ सिर मगल छत्र धरचौ है ।। ३६६

अथ भारतीलक्षन

दोहा– हास्य बीर करुनारसहि, रचि बर-अक्षर प्रीति ।
कहत सुकबि कबिता-निपुन, यहै भारती रीति ।। ३६७

यथा–आजु लसै बनितानके[1] बीचि, रही अग-अगन जोबन जोरै ।
रातिके सो रदनछदकौ, अलकानितै[2] ढापति है चषचोरै ।।
ता छिनकी छबिता छकिकै, यह उप्पमता मन अैसै निहोरै ।
जैसे सुधाधरसौ सिमटाय, अमी उपटात मनौ इक बोरै[3] ।। ३६८

अथ आरभटीलक्षन

दोहा– आरभटी तीजी कहौ, बृत्ति जमक सरसाय ।
भय रु रौद्र बिभत्स रस, बरनत सब यहि[4] भाय ।। ३६९

यथा–गाजकै सज्जल कज्जलसे, घन छूटि मदज्जलसे झर जागी ।
मोरके सोर करै चहु ओर, सौ चचला ज्यौ चलि षाग उनागी[5] ।।
कैसे करौ हौ रहौ न मिलै, बिन ए अषिया जिनसौ अनुरागी ।
तू सुनि री बलि या न भली, बली बैरनि ज्यौ बरिषा[6] रितु[7] लागी ।। ४००

अथ सात्विकीलक्षन

दोहा-- बीर रौद्र अद्भुत समह, होत जु ए रस आनि ।
बृत्ति सात्विकी[8] कहत है, कबिता मतकौ जानि ।। ४०१

यथा–रैनि दिना अभिलाषभरी, नहि रोकी रुकी पलकी पषियासौ ।
बाहरिकी घरकी सब त्रास, तजी कुल लाज लगी लषियासौ[9] ।।
देषै बिना जिय लेषै नही, अधिकी इनि रीति गही झषियासौ ।
तेरी सौ ए नही मेरी सगो, एरी नौज लगौ अपिया अषियासौ ।। ४०२

इति बृत्ति

---

३९८ १ ख वनितानिकै । २ ख अलिकानितै । ३ ख मनो इक चोरे ।
३९९ ४ ख ईहि ।
४०० ५ ख. ज्यो पावन पागी । ग. उन आगी । ६ ख बरखा । ७ ख रित ।
४०१ ८ ख व्रति सात्विकी
४०२ ९ ग अषियासौं ।

अथ अनरस कबित्तवर्नन

दोहा– प्रतनोक नीरस बिरस, और सुनहु दुसधान ।
पातर-दुष्ट कबित्त जिनि, बरनहु सकबि सुजान ।। ४०३

अथ प्रतिनीकलक्षन

दोहा– जहा सिंगार बिभत्स भय, बीरहि कहै बषानि ।
करुना अरु रौद्रहि तहा, प्रतिनीक रस जानि ।। ४०४

यथा– बात चलावत हौ तुम ज्यौ-ज्यौ, वै बातनि ही मधि मान मलै है[1] ।
जौ[2] छलसौ छल्यौ चाहौ तौ वैऊ, महाछलकै छलकोरि छलै है ।।
जौ चित आनत हौ अनतै, कहुं जाय एतौ वैऊ आय रलै है ।
ज्यौं-ज्यौ निहारत हौ बृजचदकौ, चौगुनी त्यौ-त्यौ चवाई चलै है ।।४०५

अथ नीरसलक्षन

दोहा– मिलि मुहुही दपति रहै, दिन प्रति औरै रीति ।
कपट रहै लपटाय यह, नीरस रसकी प्रीति ।। ४०६

यथा– नेह समुद्रकी थाह अथागन, लेषौ चहै सु तौ क्यौ निबहै है ।
पौनके पायन दौरचौ चहै, चित चौरचौ चहै सु वो कैसै लहै है ।।
नदके नदनकौ बसि कीबौ चहै, सु तौ बावरी बानि गहै है[3] ।
अैसै नही करिबौ कबहू[4], मुष औरै कहै मन औरै कहै है ।। ४०७

अथ बिरस-रसलक्षन

दोहा– सोग माझ बरनै जहा, भोग बिबधि बिधि बानि ।
ताहि कहत है बिरसरस, सब कबिराज बपानि ।। ४०८

यथा– नदके नदनसौ वहै बात, चहै सु तौ बावरी क्यौ बनि आवै ।
वै तो रगे रग राधिकाकै, जिनकौ अब दूसरो[5] कौन सुहावै ।।
कीजे बिचारनके उपचार, बृथा है[6] बिथा तौहि को समझावै ।
काहेकौ एती करं मनमै, अली पीछे परै कछु हाथ न आवै ।। ४०९

---

४०५ १ ख भले है। २ ख ज्यो।

४०७ ३ ख. ग वावरि वन गहै है। ४ ग कवहू।

४०९ ५ ख अवर दूसरी। ६ ख व्रथा है। ग वृषा है।

अथ दुसंधानलक्षन

दोहा– इकु[1] अनकूल[2] बषानिए, नीकी भाति पिछानि ।
प्रनिकूल दूजौ करै, ताकै पोछै आनि ।। ४१०

यथा–दीजे दही, कहौ काहे कौ दीजे जू ? दान हमारौ, न मोल नक्यौ है ।
मोल कहा है ? तो लेहु दही, नहि देहु तौ, देह न अैसै वक्यौ है ।।
जैहौ नौ रोकि है, को, हम रोकि है, तौही रुकी न रुको तरक्यौ है ।
तौही तिहारौ बिक्यौ जु बिक्यौ,
तौ बिक्यौ तौ बिक्यौ न बिक्यौ न बिक्यौ है ।। ४११

अथ पातर दुष्टलक्षन

दोहा– पुष्ट और ही कोजिए, होइ औरकी चाह[3] ।
तासौ पातर दुष्ट सब, कहि बरनत कबिनाह[4] ।। ४१२

यथा– सेहरकै जु तजे हरकै, मिलि जे बलि ये हरिकै जिय जी है ।
पैनै रसालके पल्लवसे, लषि चपककी कलिकान जकी है ।।
बिद्रमहार बहारन बिब, ठहा रिसकै नहि एक रती है ।
प्रातके पकज पेलि प्रभा, पग सोहत जावक[5] पावकसी है ।। ४१३

इति श्रीनेहतरगे राव राजा श्रीवुद्धसिघ सुरचते चतुर बिधि कवित्त वृत्ति पचबिधि अनरस कवित्त निरूपण नाम एकादशौ तरग ।। ११

★

अथ छह[6] रितुबर्नन

दोहा– रितु बसत ग्रीषम अवर, पावस सरद सुजानि[7] ।
हिम रु[8] सिसरि सजुत सरस, छ रितु लेहु पहचानि ।। ४१४

अथ बसतबर्नन

दोहा– करत गुज मिलि पुज अति[9], लपटै लेत सुगध ।
ठौर ठौर झौरत झपत, भौंर-झौर मद अध ।। ४१५

---

४१० १ ख इक । २ ख अनुकूल ।
४१२ ३ ख ओर ही चाह । ४ ख कविताह ।
४१३. ५ ख सोहन जावक ।
४१४. ६ ख छहु । ७ ग सुजाण । ८ ग हिमरुति ।
४१५ ९ ख मिलि पुज अलि ।

यथा– फूली[1] लता नव पल्लवकी, सो जटा षुलि केसरि ज्यौ छबि छायौ ।
गुजन भौरनकी चहुधा, कुसमाद पलासनकै नष लायौ ॥
सीतल-मद-सुगध समीर, तिही भय त्रासन आगम धायौ ।
यौ बृजपै[2] बृजराज बिना, रितुराज मनौ मृगराज ह्वै आयौ ॥ ४१६

अथ ग्रीषमबर्नन

दोहा– परि अताप किरनै प्रकट, दाधे तरु सरुजात ।
जग देषत ज्वाला लगै, जोगी जेठ जमात ॥ ४१७

यथा– धूप तपै तपताप पचागि[3], दवागिनि सो भगवा रग सोहै ।
लेप बिभूति किये अंग ज्यौ, मृगकी त्रिसना तकि त्यौ अवरोहै ॥
फूलि रहे छकि नैन सरोज से, उप्पमता लषिकै मन मोहै ।
यौ किरनै रहि छूटि छटानही, ग्रीषम जोगी जटाधर सोहै ॥ ४१८

अथ बरषाबर्नन

दोहा– भसम धूम अबर घटा, छटा धनष राकेस ।
जटाजूट षुलि चचला, घन महेस आदेस ॥ ४१९

यथा–छूटि झरै धुरवा गति ज्यौ[4], गगधार हजारनकी सरषा है[5] ।
बादर नाहि बिभूति लसै, नाद कोकिल कीजतिकी[6] करषा है ॥
चचला सोहै जटा षुलिकै, भाल चदसो चद्रिकाकी निरषा है ।
उप्पमताई सौ यौ परसै, दरसै महादेव किधौ बरषा है ॥ ४२०

अथ सरदबर्नन

दोहा– बदन - चद षुलि चद्रिका, दृग - सरोज सम आज ।
आई है करि आतुरा[7], सरद पातुरा साज ॥ ४२१

यथा– चचल चकोर चहु वोर जोर हसनकी ,
चदमुष चादिनोसी छूटि छबि छाई है ।

---

४१६ १ क फुली । २ ख या व्रजमें ।

४१८ ३ ख पचाग्नि ।

४२० ४ ख धुरॅवा गति त्यो । ५ ख वरखा है । ग वरवा है । ६ ख कजतकी ।

४२१ ७ ख आतुरी ।

मोतीहार मिलिकै सुकल प[प]छि मांनसर ,
षुले से[1] सरोजन दृगन दुति पोई है ।
सुधा बरसांन देपै देत बरदान यौ ,
परसपर उपमा प्रवाह परसाई है ।
अंग-अंग साजसौ सुदेस छबि आजु सोहै ,
सारदा ज्यौ सरद समाज सजि आई है ।। ४२२

अथ हेमंतवर्नन

दोहा– सब जगमै सब जननकौ[2], सुषदायक सुभनत ।
तेल तूल तांबूल तप, तापन तपन अनंत ।। ४२३

यथा–बाढी निसा बहरै छहरै, ससि छूटि कलारस अमृत भीनौ ।
सीत चहू दिस फैलि महा, तरु पछी लता कुमिल्हात अधीनौ ।।
त्यौ उतरात समीर झकोर, लगै जलहू थिरतापन लीनौ ।
ज्यो जियसो तियसो पियसौ, जग मानौ हिमंत जुराफसौ कीनौ ।। ४२४

अथ सिसरिवर्नन

दोहा– मत्त मकरधुजमै किये, नरनारी सव जीति ।
बिटपबृंद दाहे सबै[3], महा सिसरिकै[4] सीति ।। ४२५

यथा– आषिन झरैसी धरै हारन प्रमोद मन ,
रैनिकौ बढाये दिन घटै अंग अैंठी है ।
चांदिनी अमल चंद चंदन अलेप तजै ,
सजै च्यारचौं ओर करि अनल थकैंठी है[5] ।
लाज बृज लगर त्यौ[6] षूटिकै बिछूटी रहै ,
आक-बाक बकति कहा धौ जिय पैठी है ।
साजिकै समाज सोभा सरस सिसरि आजु ,
जोगनीसी बावरी बियोगिनी ह्वै बैठी है ।। ४२६

---

४२२ १ ग षुल से ।
४२३ २ ग सब जनकौं ।
४२५ ३ ख सब है। ग दहि सवै। ४ ख सिसरकै ।
४२६ ५ ख अनल इकंठी है । ग अनल यकंठी है। ६ ख. व्रजरगर ज्यों ।

अथ पिंगल मतबर्नन

दोहा– बहुत छंद कृत नागके, पिंगल मत[1] बिसतारि ।
बिदत छंद कछु कहत हौं[2], सो नीकै उर धारि ॥ ४२७

अथ गनबर्नन

यथा– त्रिगुरु मगन महि देवता श्रवत सिरी ,
त्रिलघु नगन नाक बुद्धि बकसै नृमल ।
आदि गुरु भगन मयक बिसतारै जस ,
आदि लघु यगन उदिक सुष दै सकल ।
मधि गुरु जगन दिवाकर उपावै रोग ,
मधि लघु रगन हुतासन हतै प्रबल ।
अति गुरु सगन बयारि सो बहावै बहु ,
अति लघु तगन गगन करै सु निफल ॥ ४२८

अथ दोहालक्षन

दोहा– तेरै मत्ता[3] प्रथम ही, पुनि[4] अग्यारह जोइ ।
तेरै ग्यारह बहुरि करि, दोहा लक्षन होइ ॥ ४२९

दोहा– हारि जात बरनत सुजस, डारि जात जलजात ।
पारिजात तो पर अलो, वारि जात निज गात ॥ ४३०

अथ गजिंद्रगतिलक्षन

दोहा– सात भगन गुरु होइ जह[5], रचौ मात बत्तीस ।
तेइस अक्षर चरनके, सो गजिंद्रगति दीस ॥ ४३१

यथा–जात चलि मिलि सग अली सु, मिली मग गोकुल माझ सवारी ।
लाग्यौ सौ लक रहे लगि केस, करी बिधि चद्रमा चोरि निबारी[6] ॥

---

४२७ १ ख मगल मत । २ ख कहत हुँ ।

४२८ ख प्रतिमें नहीं है ।

४२९ ३ ख. तेरे सत्ता । ४ ख पुन्न ।

४३१ ५ ख जहँ ।

४३२ ६ ख चोरि नवारी ।

चीर हरै लहगा लसै लाहकै[1], छूटि रही अलकै न सुधारी ।
चाय चढी[2] चित आय चढी, अषियानि गडी बडी आषिनवारी ॥ ४३२

अथ दुमिलालक्षन

दोहा– सगन आठ कीजे जहा, चौइस बरन बनात ।
मात बतीसह चरनकी, दुमिला छद कहात ॥ ४३३

यथा–इहि रूप लषी वह आवत ही, मनमोहनीसी पल पाषनिमै ।
दरसै दुतिकौ परसै मृगनी, सरसै सफरीनकी साषनिमै ॥
जबतै बिछुरी दृगतारनितै[3], पुतरी घनस्यामके ताषनिमै ।
तबहीतै षुभी पियके हियमै, वन आषिनकी छबि[4] आंषिनमै ॥ ४३४

अथ प्रेमसवया लक्षन

दोहा– करौ मात इकतीस पद, च्यारि चरन जुत प्रीति ।
षोडस पदरा पर विरति, प्रेमसवैया रीति ॥ ४३५

यथा–चपक रभ अब द्रुम मौरे, चहु दिसि कोकिल कूक सु लग्गी[5] ।
गुन गालिव गुलाब केतक पर, कमलनि अलिकुल माल बिलग्गी ॥
अमल चद वै किरनि चदकी, त्रिबिधि समीर जुन्हाई जग्गी ।
यह जीवन लग्गे एते पर लग्गै, अग्गि वाव फिरि बग्गी ॥ ४३६

अथ मनहरनलक्षन

दोहा– पोडस पद्रह पर बिरति, चरन अंक यकतीस[6] ।
छद नाम मनहरन है, गुरु इक अतक बीस ॥ ४३७

कवित्त– चूक्यौ फिरै चद लषि चपक विभूक्यौ फिरै ,
षजन षिसात फिरै समता न साधेकी ।
कुदन-कलानि वारि[7] डारी चचलानि सोहै ,
कमला कलासी अगरग चकचाधेकी[8] ।

---

४३२ १ ख लायके । २ ख ग पाय चढ़ी ।

४३४ ३ ख ग दिगतारनमें । ४ ख उन आखिनकी छवि ।

४३६ ५ ख सू लगी । ग सु लगी ।

४३७ ६ ख इकतीस ।

४३८ ७ ग कुदन कलानि वारि । ८ क चक चधिकी ।

बृंदाबनचंद चित लोचन अधार वै ,
अराधै निस-द्यौस भायक यौक समाधिकी ।
बिरहके दाधे इन नैननि हमारेकी जौ ,
बाधेकौ हरौ न तौ हजार सौंह राधेकी ॥ ४३८

अथ कडषालक्षन

दोहा– दस दस सतरै पर[1] बिरति, सप्ततीस सब मात ।
कहत भूलना याहि कबि, कोऊ कडषा[2] गात ॥ ४३९

यथा– चंद्रमुख चंद्रिका अंग चहु वोर पुलि ,
चषनि चिति चाहि चक्कोर मंडी ।
भाल ससि दोजि त्रिय नैन भौंहै ,
चढी बढी आरकत्त दुति[3] अषंडी ।
बिष्णु ब्रह्मा चरन सरन संकर सदा ,
सिद्धिदायनि महा कर उदंडी ।
नमो मत्त - मात्तंग[4] कुंभ कुच - ललिता ,
प्रगट एक अद्वैत जागर्त्त[5] चंडी ॥ ४४०

अथ छप्पैलक्षिन

दोहा– ग्यारह तेरह मातके, च्यारि चरन सुध हानि ।
पंद्रह तेरह चरन जुग, छप्पै छंद सुजानि ॥ ४४१

यथा– झलकि चंद सिर गंग[6], बलित भू[ष]न भयंग अंग[7] ।
मिलित रुंड उर माल अंग अरधंग गवरि संग ॥
दृग निमत्त[8] उनमत्त-मत्त भुव भंग भंग रुष ।
मिलन मत्त बिबिभ्रंग संग अवली संभाल मुष ॥
नरदेव देव बंदत चरन, अंबर बाघंबर अटल ।
त्रिहुलोकनाथ कैलासपति, जय जय जय जोगी जटल ॥ ४४२

इति श्रीनेहतरंगे रावराजा श्रीबुद्धसिंह सुरचते पिंगल
मत छंद निरूपण नाम त्रियदसो[9] तरंग

४३९ १ ख तेरे पर । २ ग षडषा ।
४४० ३ ख ग आरक्त दृग दुति ४ ख मनोमत्त मातंग । ५ ग. जागर्त ।
४४२ ६ ख सिर गिर गंग । ७ ख भूपन भुयंग अंग । ८ ग निमित्त ।
ख त्रियोदशो । ग त्रिदुसो ।

अथ अलकारबनन

दोहा– नवरस बरनै बहुरि कछु, पिगल छद बताय ।
अलकार अब कहत हौ, बर्नन अवसर पाय ।। ४४३

छद मुत्तीयदाम

कहौ लछिन लछिलकृत नाम ।
सुनौ चित दै छद मुत्तीयदाम ।।
अना अबरन्न रु बाचकधर्म्म ।
लुपै लुपता चहु पूरन कर्म्म[1] ।। ४४४

अलकृत पूरन उप्पम[2] मानि ।
तिया मुषचदसौ[3] उज्जल जानि ।।
इकै द्वय[4] तीनि बिना निरधार ।
लहौ उपमा इम लुप्त बिचार ।। ४४५

तिया सम[5] सुदर को जग जानि ।
सु तौ नव हेमलता सी बषांनि ।।
सुनौ सजनी पिक बैन पिछानि ।
वहै मृगनैनि बसै चित आनि ।। ४४६

अनन्वय नाम सुलक्षिन[6] लेषि ।
तिया मुष जैसौ तिया मुष देषि ।।
कहौ उपमानु यहै उपमेय ।
तहा परसप्पर उप्पम देय ।। ४४७

लसै हगसे[7] कज कजसे नैन ।
सुबैन सुधासे सुधा - सम बैन ।।

---

४४४ १ ख कर्म ।

४४५ २ ख उपमा । ३ ख. सुषचद । ४ ख ग दुय ।

४४६ ५ ख सव । ग साम ।

४४७ ६ ख. सुलक्षन ।

४४८. ७ स. द्रगसे ।

प्रतीप कहौ बिधि पांच बनाइ ।
इही क्रम लछि रु[1] लछिन पाइ ॥ ४४८

प्रतीप सु उप्पम ह्वै उपमेय ।
भयौ ससि आननसौ[2] तुव सेय ॥
निरादर उप्पमतै उपमेय ।
कहा ग्रब बैननि बीन न लेय ॥ ४४९

जाहा[3] उपमेयतै उप्पम हीन ।
तकै तन तो[4] भइ दामनि दीन ॥
कछू उपमा समता सम नाहि ।
तिया गजसी गति क्यौ कहि जाहि ॥ ४५०

बृथा उपमा उपमेय सु सार ।
नही पिककै सुध बैन उचार ॥
इसी बिधि पच प्रतीप बताय ।
कहै कबिराज उकत्ति[5] उपाय ॥ ४५१

अलकृत रूपक द्वै बिधि जानि ।
समान इकै नहि दूजे समान ॥
समान सुलक्षिन जानि समान ।
तिया कुच सुदर सभु प्रमान[6] ॥ ४५२

समान न और समान न जोइ ।
कलक बिना मुषचद न होइ ॥
प्रणाम सुकाज करै उपमान ।
लषै दृग-पकजतै तिय जान ॥ ४५३

---

४४८ १ ख ग लक्षरु ।

४४९. २ ख आन ग्रसौ ।

४५०. ३ ख. ग जहा । ४ ख तनु तों ।

४५१ ५ ख उकति ।

४५२. ६ यह पक्ति 'ग' प्रतिमे तृतीय चरण पर है ।

इकै बहु मानै उलेष सुचाल ।
कहैं हरि सत रु दुज्जन काल ॥
इकै बहुतै गुन दूजौ उलेष ।
तिया रतिरूप रु जोति[1] निसेस ॥ ४५४

सुनौ जु सुमर्ण अलकृत भाय ।
लषै उपमां उपमेय सु पाय ॥
मिली वह औधि कही हुती[2] तीज ।
लषी सग राधे लषै घन बीज ॥ ४५५

भ्रमै तह ग्यानहु सो भ्रम होइ ।
इहै[3] मुष चद चकोर न कोइ ॥
लषौ जु सदेहु सदेहु ही साज ।
किधौ मुष - कज किधौ निसराज ॥ ४५६

दुरै ध्रम सुद्य[4] अपुन्हति जानि ।
जलद्दन माते मतग बषानि ॥
अपुन्हति हेत[5] दुरै उपमेय ।
न मोहन ए छबि कामहि देय ॥ ४५७

सुप्रज सुता गुण और ही रुष्ष[6] ।
सुधाकर नाहि सुधाकर मुष्प ॥
अपुन्हति भ्रम सुभ्रम न हौन ।
नही गजगौन न हसहि गौन ॥ ४५८

अपुन्हति छेकसु जुक्ति दुराव[7] ।
कपोलनि पीक नही रदघावं ॥

---

४५४. १ ग जोति ।

४५५ २ ग हुती ।

४५६. ३ ख. रहै ।

४५७ ४ ख धर्म सुद्ध । ५ ख केत ।

४५८ ६ ख रुग्य ।

४५९ ७ ग मुराव ।

अपुंन्हति कै तव ह्वै मिस[1] भांति ।
हसैं मुषकाति करैं ससिकांति ।। ४५६
इहै उतप्रेछ जु संसय साच ।
गनौ इक हेत इकै फल बांच[2] ।।
न ती सम[3] चाल धरै गज धूरि ।
मनौ तुव ओठ सुधा ससि पूरि ।। ४६०
(सह्यौ) कति अतिसैं[4] उप्पम होइ ।
लसैं जलजात पैं षजन दोइ ।।
अपुन्हित सो गुण औरके और ।
सुगध तिया नहिं चपक ठौर[5] ।। ४६१
इकै भिद काति कहावति और ।
लसैं तुव नैननि[6] औरहि दौर[7] ।।
अजोगहि जोग सबधति देषि ।
जलन्निधि छोटौ रु मीन बिसेषि ।। ४६२
सयोकति जोगकौ कीजे अजोग ।
भए कुच सेन करैं सिव जोग ।।
मिले अक्रमाति[8] जु कारण काज ।
लगे दृग नेह इकै सग साज ।। ४६३
सुनौ चपलाति सु चचल भाति ।
पिया मिलिकै तनमै न समाति[9] ।।
सयोकति पुन्हति होइ तौ होइ[10] ।
सुधा तुव वैनसौ जोइ तौ जोइ ।। ४६४

---

४६०. १ ख तुव हैं मिसि । २ ख वाचि । ३ ख न ता सम ।

४६१ ४ ख अतिसय । ५ ख. चंपक खोर ।

४६२ ६ ख नेंनन । ७ श्रोर हि दोगि ।

४६३ ८ अक्रमात ।

४६४ ९ ख तन मो न समात । १० ग होय तौ होय ।

जहा बिपरीति अतिंतति गाय ।
मिलै पहलै सवतै परी पाय ॥
कहै तुलियोग सु तीन सुरूप ।
लहौ क्रम तें यह रूप अनूप[1] ॥ ४६५

हितू अहितै पद एक प्रमान ।
हित अरिकौ अति दीजत मान ॥
इकै सब दैवहुकौ बिसराम ।
बढै रतिराजमै कोकिल काम ॥ ४६६

गुणै समता बहु मै जु लषाय ।
सिवारति तू वरमां तुव पाय ॥
सुदीपक बस्त[2] क्रिया सुबिचार ।
पिकै मधु पावक केकि उचार ॥ ४६७

तहा[3] पद आबृति दीपक हौइ ।
दिपै मुष[4] तीय दिपै ससि जोइ ॥
सु अर्थ जु आबृति[5] दीपक कीय ।
तक्यौ दिन औधि लष्यौ तब पीय ॥ ४६८

पदारथ आबृति दीपक आहि ।
सखी तिय चैन भयौ पिय चाहि[6] ॥
कहै प्रति बरन[7] सु उप्पम ताहि ।
रहै इक अर्थ दुहू पद माहि ॥ ४६९
हितू निज होइ कहै सिप बात ।
अरी समभावत छै तुव गात ॥
दप्टात[8] इहै लषि लक्षिन नाम ।
लहै उपमा प्रतिबिंब सु ताम ॥ ४७०

---

४६५. १ ख रूप अरूप ।
४६७ २ ख वस्तु ।
४६८. ३ ख जहा । ४ ख, दियें मुख । ५ ख आव्रत ।
४६९. ६ ख पिक चाहि । ७ ख प्रति वस्तु ।
४७० ८ ख द्रष्टात ।

बनै लघु पै नहि ऊचके[1] साज ।
करै जुगनू कबै भानके काज ।।
सुनौ कबि निद्रसना त्रिय भेद ।
सुपोपक अग दुहु बिन षेद ।। ४७१
सुहागनि और दुहागनि गाव ।
बिना बरसै रति पावस भाव ।।
सुनौ द्रसनागुन और म कीन ।
करी गति कामनिकी गहि लीन ।। ४७२
सुनिद्रसना इक या बिधि पाइ ।
भलौ र[2] बुरौ फल कारज भाइ ।।
अनीकौ रु नीकौ सु कान्ह रु कस ।
निद्रसन तीनकि ऐसी प्रसस ।। ४७३
अलकृत यू बितरेक कहेय ।
तहा[3] उपमा तै भलौ उपमेय ।।
कहैं तन कुदन सौ किमि[4] होइ ।
कठोर तहा न सुगध समोइ ।। ४७४
सहौकति सो इक साथहि जान ।
छुटयौ[5] सग मानकै सौतिन मान ।।
बिनौकति द्वै बिधि ह्वै जग मद्धि[6] ।
भलौ र बुरौ कछु अर्थतै सिद्धि[7] ।। ४७५
भलेतै भलौ सु बिनौकति गाव ।
लसै हसती सग फौज बनाव ।
बिनौकति सो फल बी[षी]नतै षीन ।।
तिया अति उत्तम रोसतै हीन । ४७६

---

४७१ १ ग ऊचके ।

४७३ २ ग भलौ रु ।

४७४ ३ ख. जहाँ । ४ ख किम ।

४७५ ५ क छुद्यो ६ ख मध्य । ७ ख सिद्ध

समासउकत्ति तहा गुन श्लेप ।
दुरि[री] चपला इन भौनमै देष ।।
सुनौ सुपरिक्कर[1] लक्षिन सोइ ।
बिसेषण भाय लये तह होइ ।। ४७७
है मुष पकज तेरौ वपानि ।
भरयौ बहु बासनि फूलत जानि ।।
परिकुर अकुर औ अभिप्राय ।
न आयि बुलाये मिली अब आय ।। ४७८
इकै पद अर्थ अनेक सलेष[2] ।
सु कुज रहै अलि मत्त बिसेप ।।
अन्यौकति[3] औरमै औरकी उक्ति ।
करी पर भौर कहा यह जुक्ति ।। ४७९
प्रजायउकत्ति कहै बिधि दोइ[4] ।
लहौ क्रमतै लक्षि लक्षिन जोइ ।।
प्रजाइ कहै कछु बिग्य तै[5] बात ।
नयौ ससि सोहत रावरै गात ।। ४८०
प्रजाय सु दूजी कहै मिस बैन ।
चली उन कुजके फूलनि लैन ।।
सुब्याजसतुत्तिहि लक्षिन धारि ।
'बकी अघ'[6] दुष्ट दळे[ए] हरि तारि ।। ४८१
सुव्याज निदालछिना महि जोइ ।
मिले हरि तैसे मिलै नहि कोइ ।।
अछेप[7] कहै न कह्यौ चहै भाव ।
सुनौ इक बात कहौ नहि जाव ।। ४८२

---

४७७ १ ख सुपरिक्षर ।
४७९ २ ख पंखेप । ३ ख अन्योक्ति ।
४८० ४ ख विधि होई । ५ विगतै ।
४८१ ६ ख यकी अघ ।
४८२ ७ ख. अछेय ।

नटै कहिकै पुनि[1] आछिप जानि ।
भरे अपराध कहू न बषानि ॥
बिरोध सुभाव बिरोधहि[2] रीति ।
सुनीति अनीतिहि राजन[3] प्रीति ॥ ४८३
बिभावन कारिज कारन छाडि ।
बुलाये बिनाही मिले रस माडि ॥
अपूरण पूरै बिभावन सोइ ।
करै[4] अबला बसि सिद्ध न जोइ ॥ ४८४
बिभावन काज रुकै न सबध ।
तिरै तकि गग गहे तम अध ॥
बिभावन काज अकाज तै होत ।
तुम्है तन सौतिकौ रूप उदोत ॥ ४८५
बिभावन कारण तै नहि काज ।
सुमोहन नाम कुचालके साज ॥
बिभावन कारण काजतै होत ।
लषौ[5] चष मीनतै बारि उदोत ॥ ४८६
बिसेष-उकत्ति अलकृत गाय ।
सुकारण होइ पै काज न[6] पाय ॥
लगै दृग बान पै षाउ न आय ।
भरे दृग नीर पै[7] प्यास न जाय ॥ ४८७
'अजोगमै जोग'[8] असभव मानि ।
कहौ कब राज बभीषन पानि ॥
असगति कारण काजहि भेद ।
लगे दृगे सौतिसौ सौतिकै षेद ॥ ४८८

---

४८३ १ ख पुन्य । २ विरोधह । ३ ख. राजत ।
४८४ ४ ग करे ।
४८६. ५ ख लखें । ग लखै ।
४८७. ६ ख कारज पाई । ७ ग प्पै ।
४८८ ८ ख अजोगतें जोग ।

असंगति ठौर बिना इक काज ।
कपोलमै अजन 'राजत साज'[1] ।।
असगति औरतै और उपाय ।
जगे मुहि चाहि लगे सौति पाय ।। ४८९
गनौ बिषमाय असगहि सग ।
'कहा हरि बाल[2]' कहा गिरि ढग ।।
सुनौ बिषमाकृति कारण भेद ।
लसै अधरारुन[3] हासि सुपेद ।। ४९०
भले फलतै ह्वै बुरौ बिषमाय ।
बियोगमै आगिन चदन लाय ।।
तहा सम होइ समा तिहि जोय ।
रमापति साथ रमा रग होय ।। ४९१
'समा पुनि काजमै'[4] कारन पाय ।
जती जग दोष न लागत काय ।।
यकै[5] सम काजहि ह्वै बिन षेद ।
सु चाहत एक मिले चहु बेद ।। ४९२
फलै बिपरीति बिचित्रहि आय ।
तिया हित हेत परै पिय पाय ।।
कहौ अधिका तह 'आधिक पाय'[6] ।
तिया-तन-रूप धरा न समाय ।। ४९३
बडी इक ठौर सु आधिक और ।
अच्यौ रिष[7] अजुलि सिध सजोर ।।
तहा अलपा अलपै तन कीन ।
पिया बिछुरैतै भई तिय छीन ।। ४९४

---

४८९ १ ख राजन साज ।
४९० २ ख कहीं हरि बाल । ३ ख. अपरारुण ।
४९२ ४ ख सभा पुनि काजसे । ५ ख. इकै ।
४९३. ६ ख साधिक पाय । ग. आधिक पाय ।
४९४ ७ ग रच्ये रिष ।

अन्यौनि[1] अलकृत नाम सुरूप[2] ।
निसा ससितै ससितै निस रूप ॥
बिसेष बिना सु अधार[3] अधेय ।
रहै नभ ऊपरि धूहरि सेय ॥ ४९५

बिसेष 'सुसुक्षिम तैं'[4] बहु सिद्धि ।
रुकम्मनि-काज लही द्विज रिद्धि ॥
बिसेष सुबयस्त[5] अनेक ठा अैन ।
सुधा तिय ओठनि[6] नैननि बैन ॥ ४९६

सु औरतै कारज और ब्याघात ।
समीर सुसीत जरावत गात ॥
सुगुफ परपर कारण पोष ।
बिषै करें पाप तजे तिहि मोष ॥ ४९७

इकावलि[7] पकति क्रमतैं[8] आय ।
बितै दत ह्वै दत तै जस पांय ॥
इकावलि दीपक दीपक-माल ।
सबै हरिमै हरि तो तन बाल ॥ ४९८

अलकृत सार सुसारहि सार ।
धरातै ससी ससितै मुष चार ॥
अनुक्रम जोग[9] जथा सषि रूप[10] ।
हरे गज दामिनि चाल सुरूप ॥ ४९९

प्रजाय अनेक सु एकहि ठौर ।
भरी 'रस आषे'[11] करी रिस और ॥
सु एक अनेकमै और प्रजाय ।
बसे पिय नैननि बैननि आय ॥ ५००

---

४९५ १ ख. अन्योन्य । २ ख ग सरूप । ३ ख ग आधार ।
४९६. ४ ख. सुक्षमते ५ ख वस्तु । ६ ख ओढनि ।
४९८ ७ ख इकाविल । ग एकावलि । ८ ख. कृभ तैं ।
४९९ ९ ख ग योग । १० ख ससि रूप ।
५०० ११ ख रिस आंखें ।

परबृत्ति थोरौ दये बहु पाय ।
गुनि दै असीस भए जगराय ।।
प्रसषि सु[1] दूसरी ठौरमै लीन ।
सुहाग सु सौतिनकौ तुव दीन ।। ५०१

इहै कै वहै बिकलप्प कि रीति ।
मिलै यह कै वह तौ बढै प्रीति ।।
समुच्चय काज अनेक कराय ।
डराय दुरै तुव सौति पराय ।। ५०२

समुच्चय 'एकमै'[2] हौहि अनेक ।
करै क[वि] पडित सग बिबेक ।
सुकारक दीप इकै वहु भाव ।
हसै तरसै सरसै करै चाव ।। ५०३

समाधिक कारन दूसरै[3] काजु ।
मिली तब औधि 'मिले पति आजु'[4] ।
सुकाबिरिथापति है इहि साज ।
बडौ भये काम कहा लघु काज ।। ५०४

हत्यौ कपि ईस का रावन रक ।
दयौ गज तौ कहा अकुस सक ।
रु काइबिलिग सु अर्थमै हेत ।
जरै तन नाह्व लहै न सकेत ।। ५०५

अर्थातरन्यास अलकृत सोइ ।
बिसेप समानहि तै दिढ होइ ।
'व देपत मोहि लिए ब्रजराज ।
सु औरकी वात कहौ किंहि काज ।। ५०६

---

५०१ १ ख असखि सु ।

५०३ २ ख एक समे ।

५०४ ३ ख दूसरों । ४ ख मिली पति आजु ।

अलंकृत होइ बिकस्सुर[1] सोइ ।
बिसेष समान विसेषहि होइ ।।
सु तौहि लषै हरि ह्वै है हजूरि ।
ह्वै दान तहा जस जानि न दूरि ।। ५०७

सुप्रोढुउकत्ति[2] जु आधिक लेह ।
लसै घन अबर[3] दामनि-देह ।।
संभावन जौ इमि होइ त होइ ।
जरावै [जो काम इहा सिद्ध होय] ।। ५०८

मिथ्या धिव सेवत[4] चचल रीति ।
थभै गिर वाल ह्वै बालकी प्रीति ।।
प्रहर्षण जत्न बिना फल पाय ।
सखी सु कहा[5] मिलि ए सुखदाय ।। ५०९

प्रहर्षण चाहैं ते आधिक आहि[6] ।
चढचो कर पारस सोनेकी चाहि ।।
प्रहर्पण वस्तु[7] उपायते[8] पात ।
भये 'सिद्धि साधिक सिद्धिकी घात'[9] ।। ५१०

विषाद सु ओरतें ओर उपाय ।
तके पर-ती निज तीय रिसाय ।।
उल्हास धरै गुण ओगुण भानि ।
कहे बलिकौ 'हरि दै भुवन दानि'[10] ।। ५११

---

५०७ १ ख विकस्वर ।

५०८ २ ख सुप्रौढ़उकत्ति । ३ ख घर अबर ।

१. टि.—कोष्ठाकित पद्यांश श्रीयुत् नाहटाजीसे प्राप्त ख प्रतिसे लिया गया है ।

२ टि.—छन्द सख्या ५०९ से ५१४ तकके छन्द [क] प्रतिमे नहीं हैं । यह ख प्रतिसे लिये गये हैं ।

५०९ ४ ग सिवत । ५ ग सुषही ।

५१० ६ क आई । ७ ग वस्त । ८ ग उपातें । ९ ग सिधि साधि ।

५११. १० हिरदै भुव दानि ।

अवग्या नही गुण ओगुण लाय ।
मने न तिया[1] परये हरि पाय ।।
अनुग्या गिणै गुण दोष न जानि ।
मिली पतितै अपराधनि मानि ।। ५१२
अवगुण ह्वै गुणमे जह लेख ।
सुधा हित ओठ न[2] पोड विशेष ।।
मुद्रा निज अर्थमे अर्थ सु ऊठि ।
सुता वृषभानकी जारत रूठि ।। ५१३
रत्नावलि नामके नाम अनत ।
निशेष[3] निसापति है निसकत ।।
तदगुन सो गुन ओरहि जोय ।
सु नो कर मुत्तिय मानिक होय ।। ५१४
पतरुख दीजै गह्यो गुन टारि ।
धसै जल पीत तजै सित बारि ।।
पतरुष क्योहू तजै गुण नाही ।
लगी क्रम कालिमा धोए न जाहि ।। ५१५
अतद्गुनै गुन नाहि गहाय ।
भय बिषसे[4] तन सकर पाय ।।
अनग्गुण[5] सो गुण लै सरसाय ।
है ककन कुदनतै अधिकाय ।। ५१६
सुमीलिति[6] ह्वै सममै सम जाय ।
हिये नहि कचन-माल लषाय ।।
समान समान तै आधिक नाहि ।
लसै 'पग लाली न'[7] जावक माहि ।। ५१७

---

५१२ १ ग त्रिया ।
५१३ २ ग वोठन ।
५१४ ३ ग. निसेस ।
५१६ ४ ख भयो विषसे । ५ ख अत्रगुण ।
५१७ ६ ख सुमीलित । ७ ख पग लागी न ।

यहै उनमीलिस[त]मै भ्रम जाय ।
लगी नन कुकुम बासतै पाय ।।
समांन समानमै पावै बिसेष ।
षुले मुष कौल कहौ[1] अलि देष ।। ५१८
गुछौ[ढो]तर उत्तर[2] भावतै होत ।
करी अलि छाडहु कौल उदोत ।।
इकै रव पूछत उत्तर चित्र ।
मिलै पति री कब री गुहि इत्र ।। ५१९
अलकृत सूक्षिम[3] बात दुराय ।
लगे नष ता पर केसरि लाय ।।
पिहीत छिप्यौ प्रगटै कछु भाव ।
रुषै मुष हास सुमान जनांव ।। ५२०
करै छल गोप सुब्याजौ-उकत्ति ।
न जावक भाल है बदन मित्त ।।
गुढोतर गूढ करै उपदेस ।
सषी चलि कुजके फूल सुदेस ।। ५२१
अत्यौकति गूढ सलेष प्रकास ।
सनेह ले आवति हौ तुव पास ।।
सुउत्तिक्रिया करि कर्म छिपाय ।
दुरावन जावक लागत पाय ।। ५२२
लुकोक्तिलक्ति लोकबिबादि ।
बसौ अनतं अलि लै हरि आदि ।।
छिकौक्ति जानु[4] अलकृत एहु ।
लुकोकति ता मधि अर्थ कहेहु[5] ।। ५२३

---

५१८ १ ख कौ लहौ ।
५१९ २ ग मुछौतर ।
५२० ३ ख सुक्ष्म, ग सूषिम ।
५२३ ४ ख जानि । ग जान । ५ ख सुदेहु ।

लषैं ही करै सजनी बस बाल ।
सुनौ तिन नाम है मोहनलाल ।।
बक्रोकति जा महि अर्थ फिराहि ।
फिरी सषि दौरि मिले हरि नाहि ।। ५२४
सुभाउ-उकत्ति सु जानि सुभाव ।
सहै पुनि देत है सूरहि घाव ।।
रू भावकि भूत भवष्षित होइ ।
अगै हुतौ काम सोई यह जोइ ।। ५२५
उदात तहा बहु अर्थ उदोत ।
बसै जहा दानी[1] तहा कबि होत ।।
इहै अति-उक्ति अतिसय जूप ।
पिया परसै भइ कुदन रूप ।। ५२६
निरुक्ति सुजोगतै अर्थ लगाय ।
लगी हरि ध्यान भई हरि भाय ।।
निषेद जु अर्थ जहा[2] प्रतिषेध ।
समीर न तीर करै तन बेध ।। ५२७
सु है बिधि अर्थहि साधिए[3] फेरि ।
सु मोहन जौ मनमोहत हेरि[4] ।।
मिले हित कारज कारण साथ ।
भयौ जस दानकै देत हि हाथ ।। ५२८
क्रिया सग कारण कारज हेत ।
मिले सुष सपति तेरै हि देत ।।
इत्ती अरथा - अलकार सुजानि ।
कहौ सबदा अब नीकै[5] बषानि ।। ५२६

५२६　१ ख　जहा दामिनी ।
५२७　२ ग　तहा ।
५२८　३ ख　साधियै ।　४ ख　मनमोहन हेरि ।
५२६　५ ग　अति नीकै

फिरै बहु बर्न दुहू बर आय।
अलकृत छेक कहै कबिराय ॥
मिली सजनी रजनी महि आनि।
घटा मधि बीज[1] छटासि वपानि ॥ ५३०

बहू बर वर्न सु बृत्तिनुप्रास।
नरी किनरी न सुरी इनि[2] पास ॥
बृत्या-अनुप्रास तै[3] बृत्ति सु तीन।
भई सु कही कबिताई नवीन ॥ ५३१

सुमाधुर ह्वै उपनागरि सोइ।
हसे हुलसै बिलसै पति जोइ ॥
गनौ परुषा तह वोज प्रकास।
हटै न घटै रपटै भट जास ॥ ५३२

रु कोमला बर्न प्रकास प्रसाद।
अरौ न करौ न परौ बकबाद[4] ॥
अनूप्रस लाट उही पद जोइ।
जपै हरिकौ हरिकौ जब होइ ॥ ५३३

जमक सुसव्द[5] वहै अर्थ और।
सु मोहन है मन-मोहन मोर ॥
इते अलकार पढै कबिराज।
लहै सुष सपति साज समाज ॥ ५३४

दोहा — नवरस पिगल छद कछु, अलकार बहु रग।
कबि पडित हित समझि कै[6], बरन्यौ नेहतरग ॥ ५३५

---

५३०. १ ख वीजु।
५३१ २ ख सुरी इन। ३ ग तै।
५३३. ४ ख चकवाद।
५३४ ५ ख जमक र शब्द।
५३५ ६ ग समझिहै।

दोहा – सतरहसै चौरासिया, नवमी तिथि ससिबार ।
सुक्ल पक्षि[1] भादौ प्रगट, रच्यौ ग्रथ सुषसार ।। ५३६

इति श्रीनेहतरगे रावराजा श्रीबुधसिघ सुरचते अलकार
निरुपण नाम चतुरदशो तरग ।। १४ ।।

इति श्रीग्रथ नेहतरग सपूरण समाप्ताः ।। श्री ।।
वाचै सुणै त्यानै श्रीराधाकृष्णजी सहाइ ।।
।। शुभ भवत् ।।

सवत् १७८५ बर्षे मिनी आषाढ बुदी ७ सोमवार पोथी लीषत च जोसी
भोपती गढ बुदी मध्ये बास्तव्य ।। पोथी लषि आबेर मध्ये ।।

श्रीकृष्ण परमात्मा ।।

।। श्रीराम श्रीराम श्रीराम श्रीराम ।।

प्रति [ख] —इति श्री नेहतरगे रावराजा श्री बुद्धसिह सुरचिते
अलकार निरूपण नाम चतुर्दशो तरग ।। १४ ।।
इति श्री नेहतरग सम्पूर्ण समाप्तम् ।

सवत् १६०१ मिति जेष्ठ बदि १ लिखितमिदे पुस्तक ।

।। शभु भवतु ।।

प्रति [ग] —इति श्री नेहतरग ग्रथ सपूर्ण समाप्त
सप दोहा छद कवित्त ५३६ ।। श्लोक सख्या १४८६ ।। श्रीरस्तु

लीषत बसतराय साभर मध्ये सवत् १८०२ मित्ती काती श्रुदि ४
बृहस्पतिवारे ।। १ ।। २ ।। ३ ।।

---

५३६. १ ग शुक्ल पक्ष ।

परिशिष्ट — १

छन्दानुक्रमणिका

[अ]

[आ]

[ष] ख

[ग]

[घ]

[ध]

[न]

क्रम सख्या	पक्ति	छ स	पृ स.
२५९	नाही वगुपाति यह कोडावलि देषियत, गरजत नांही बाजै सांकरनि भेले है	३८३	७३
२६०	न्हांन सवै जमुना जलकों, ब्रजके नर नारी हिये उमगे हैं	३७८	७२
२६१	निकसत हसत निसक जह, होत सिथल सब अग	३६७	७०
२६२	निर्वेद, गलानि, सका, आलस, दय, निमोह, श्रम, मद, कोह, मति, सुमृति, बषानिये	३१५	५९–६०
२६३	निरुक्ति सुजोगतै अर्थ लगाय	५२७	९८
२६४	नीलवरन विभत्सरस, अति निंदामय देह	३८५	७३
२६५	नेवर जराऊ मनि जेहरी विसरि दोऊ, पाइ अरिविंदन पै वदिनको घरिबौ	३४१	६४
२६६	नेह-रूप अभिमांन सौं, तहां अनादर होइ	३३४	६३
२६७	नेह समुद्रको थाह अथागन, लेषो चहै सुतो क्यौं निबहै है	४०७	७७
२६८	नैक न लाज समाजकी, महा मानियत कानि	३१९	६०
२६९	ननिनि अजनकै धरिवै, धरिवै भृकुटीनकी जूटै निकाई	३२०	६०
२७०	नैननि- वैननि सैन विधि, उपजत हियें हुलास	३५२	६७
२७१	नौंतेकै मन्दिर मिली, नवनदनसौं जूटि	१२६	२६

[प]

क्रम सख्या	पक्ति	छ स	पृ स.
२७२	पतरुष दीजै गह्यो गुन टारि	५१५	९६
२७३	पतिकों साअपराध लषि, कहै नु कछुक जताय	६३	१४
२७४	पति विदेस जाको बसै, निसदिन नींद बिहाय	९४	२०
२७५	पत्री दोइ प्रकारकी, बरनत है कबिराज	२९४	५६
२७६	पदारथ आवृति दीपक आहि	४६९	८८
२७७	परत पुंज अति विरहके, तम-निकुज घहराति	१४०	२८
२७८	परबृत्ति थोरी दयें बहु पाय	५०१	९४
२७९	परम भांवतो मित्र तह, सुपने वरसै आय	३५	८
२८०	परि अताप किरनै प्रकट, वाघे तरु सरुजात	४१७	७९
२८१	पहलो सोहित सहज उर, अति विचित्र सम प्रीति	१३	३
२८२	पहिलें तजि मांन मनाय रही, परि पाय कितीक कियें उपषांनै	३४७	६६
२८३	प्रगलभ-वचनां जानिये, जाकी ऐसी रीति	५६	१२
२८४	प्रजाय अनेक सु एकहि ठौर	५००	९३
२८५	प्रजायउक्ति कहै बिधि दोइ	४८०	९०
२८६	प्रजाय सु दूजी कहे मिस बैन	४८१	९०

[फ]

[भ]

[म]



परिशिष्ट — २

सहायक ग्रन्थों की सूची

१ ईश्वरविलास—श्रीकृष्ण भट्ट, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

२. कविप्रिया—केशव, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ।

३ डिंगल कोश—श्री नारायणसिंह भाटी, राजस्थानी शोध-सस्थान, जोधपुर।

४ बूंदी राज्य का इतिहास—श्री जगदीशसिंह गेहलोत, हिन्दी साहित्य मदिर, जोधपुर।

५ भारतीय काव्य-शास्त्र की भूमिका—डॉ० नगेन्द्र, ओरियेंटल बुक डिपो, दिल्ली।

६ रसिक प्रिया—केशव, वेंकटेश्वर प्रेम, बम्बई।

७ राजपूताने का इतिहास—डॉ० गौरीशकर हीराचद ओझा, वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।

८. राजस्थान के हिन्दी साहित्यकार—हिन्दी साहित्य परिषद, जयपुर।

९ राजस्थान का पिंगल साहित्य—डॉ० मोतीलाल मेनारिया, हितैषी पुस्तक भण्डार, उदयपुर।

१०. राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थो की खोज—भाग १-४, राजस्थान विद्यापीठ शोध-सस्थान, उदयपुर।

११ राजस्थानी भाषा और साहित्य—डॉ० मोतीलाल मेनारिया, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद।

१२ राजस्थानी भाषा और साहित्य—डॉ० हीरालाल माहेश्वरी, आधुनिक पुस्तक भवन, ३०-३१, कलाकार स्ट्रीट, कलकत्ता ७।

१३ वशभास्कर—सूर्यमल मिश्रण, प्रताप प्रेस, जोधपुर।

१४ वीर विनोद—कविराजा श्यामलदास, सरस्वती भवन, उदयपुर।

१५ हिन्दी साहित्य कोश—ज्ञान-मण्डल, बनारस।

१६ हिन्दी हस्तलिखित ग्रन्थो की खोज—नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

१७ हिंदी साहित्य का इतिहास—रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी।

१८ हिन्दी साहित्य की भूमिका—हिन्दी ग्रथ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई।

१९ Annals and Antiquities of Rajasthan, James Tod., Routledge & Kegan Paul Ltd , London.



राजस्थान पुरातन ग्रन्थ-माला

प्रधान सम्पादक–पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

++++++++++

प्रकाशित ग्रन्थ

१ संस्कृत

१ प्रमाणमंजरी, तार्किकचूडामणि सर्वदेवाचार्यकृत, सम्पादक – मीमांसान्यायकेसरी पं० पट्टाभिरामशास्त्री, विद्यासागर। मूल्य–६.००

२ यन्त्रराजरचना, महाराजा सवाईजयसिंह-कारित। सम्पादक–स्व० पं० केदारनाथ ज्योतिर्विद्, जयपुर। मूल्य–१ ७५

३. महर्षिकुलवैभवम्, स्व० पं० मधुसूदन ओझाप्रणीत भाग १, सम्पादक–म०म० पं० गिरिधरशर्मा चतुर्वेदी। मूल्य–१०.७५

४ महर्षिकुलवैभवम्, स्व० पं० मधुसूदन ओझा प्रणित भाग २, मूलमात्रम् सम्पादक–पं० श्री प्रद्युम्न ओझा। मूल्य–४ ००

५ तर्कसंग्रह, अन्नंभट्टकृत, सम्पादक–डॉ जितेन्द्र जेटली, एम ए, पी-एच डी., मूल्य–३ ००

६. कारकसंबंधोद्योत, पं० रभसनन्दीकृत, सम्पादक–डॉ० हरिप्रसाद शास्त्री, एम ए, पी-एच. डी.। मूल्य–१ ७५

७ वृत्तिदीपिका, मौनिकृष्णभट्टकृत, सम्पादक–स्व.पं पुरुषोत्तमशर्मा चतुर्वेदी, साहित्याचार्य। मूल्य–२ ००

८. शब्दरत्नप्रदीप, अज्ञातकर्तृक, सम्पादक–डॉ हरिप्रसाद शास्त्री, एम ए, पी-एच. डी। मूल्य–२.००

९. कृष्णगीति, कवि सोमनाथविरचित, सम्पादिका–डॉ. प्रियबाला शाह, एम ए, पी-एच. डी, डी लिट्। मूल्य–१.७५

१० नृत्तसंग्रह, अज्ञातकर्तृक, सम्पादिका–डॉ प्रियबाला शाह, एम ए, पी-एच. डी., डी लिट्। मूल्य–१ ७५.

११. शृङ्गारहारावली, श्रीहर्षकविरचित, सम्पादिका–डॉ प्रियबाला शाह, एम ए, पी-एच.डी, डी लिट्। मूल्य–२ ७५

१२ राजविनोद महाकाव्य, महाकवि उदयराजप्रणीत, सम्पादक–पं० श्रीगोपालनारायण बहुरा, एम ए., उपसञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर। मूल्य–२ २५

१३ चक्रपाणिविजय महाकाव्य, भट्टलक्ष्मीधरविरचित, सम्पादक–केशवराम काशीराम शास्त्री मूल्य–३ ५०

१४ नृत्यरत्नकोश (प्रथम भाग), महाराणा कुम्भकर्णकृत, सम्पादक–प्रो रसिकलाल छोटालाल पारिख तथा डॉ० प्रियबाला शाह, एम ए, पी-एच डी., डी लिट्। मूल्य–३ ७५

१५ उक्तिरत्नाकर, साधुसुन्दरगणिविरचित, सम्पादक–पुरातत्त्वाचार्य श्रीजिनविजयमुनि, सम्मान्य संचालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर। मूल्य–४ ७५

१६ दुर्गापुष्पाञ्जलि, म०म० पं० दुर्गाप्रसादद्विवेदिकृत, सम्पादक–पं० श्रीगङ्गाधर द्विवेदी, साहित्याचार्य। मूल्य–४.२५

१७ कर्णकुतूहल, महाकवि भोलानाथविरचित, सम्पादक–पं० श्रीगोपालनारायण बहुरा, एम. ए, उप-संचालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर। इन्हीं कविवर की अपर कृति श्रीकृष्णलीलामृतसहित। मूल्य–१ ५०

१८ ईश्वरविलासमहाकाव्यम्, कविकलानिधि श्रीकृष्णभट्टविरचित, सम्पादक–भट्ट श्रीमथुरानाथ शास्त्री, साहित्याचार्य, जयपुर। मूल्य–११ ५

प्रेसों में छप रहे ग्रंथ

संस्कृत

१. शकुनप्रदीप, लावण्यशर्मरचित, सम्पादक–मुनि श्रीजिनविजय ।
२. त्रिपुराभारतीलघुस्तव, धर्माचार्यप्रणीत, सम्पादक–मुनि श्रीजिनविजय।
३ करुणामृतप्रपा, भट्ट सोमेश्वरविनिर्मित, सम्पा०–मुनि श्रीजिनविजय ।
४. बालशिक्षाव्याकरण, ठक्कुर सग्रामसिहरचित, सम्पा०–मुनि श्रीजिनविजय ।
५ पदार्थरत्नमजूषा, प० कृष्णमिश्रविरचित, सम्पा०–मुनि श्रीजिनविजय ।
६. वसन्तविलास फागु, अज्ञातकर्तृक सम्पा०–श्री एम सी. मोदी ।
७ नन्दोपाख्यान, अज्ञातकर्तृक, सम्पा०-श्री बी जे साडेसरा ।
८. चान्द्रव्याकरण, आचार्य चन्द्रगोमिविरचित, सम्पा०–श्री बी डी. दोशी ।
९ वृत्तजातिसमुच्चय, कविविरहाङ्करचित, सम्पा०–श्री एच डी. वेलणकर ।
१०. कविदर्पण, अज्ञातकर्तृक ,, ,, ,,
११ स्वयभूछन्द, कविस्वयभूरचित ,, ,, ,,
१२ प्राकृतानन्द, रघुनाथकविरचित, सम्पा०–मुनि श्री जिनविजय ।
१३ कविकौस्तुभ, प० रघुनाथरचित, ,, श्री एम. एन गोरी ।
१४ एकाक्षर नाममाला—सम्पादक–मुनि श्री रमणीकविजयजी ।
१५. नृत्यरत्नकोश, भाग २, महाराणा कुभकर्णप्रणीत, सम्पा०–डॉ. प्रियबाला शाह
१६ इन्द्रप्रस्थप्रबन्ध, सम्पा०–डॉ श्रीदशरथ शर्मा ।
१७. हमीरमहाकाव्यम्, नयचन्द्रसूरिकृत, सम्पा०–मुनि श्रीजिनविजयजी ।
१८ स्थूलिभद्रकाकादि, सम्पा०–डॉ० आत्माराम जाजोदिया ।
१९ वासवदत्ता, सुबन्धुकृत, सम्पा०–डॉ० जयदेव मोहनलाल शुक्ल ।
२०. घटखर्परादि पचलघुकाव्यानि ,, प० अमृतलाल मोहनलाल ।
२१ भुवनदीपक, यावनाचार्यकृत, सम्पा०–प० श्रीपुरुषोत्तमभट्ट ।
२२. वृत्तमुक्तावली, श्रीकृष्ण भट्ट गुम्फित, सम्पा० प० श्री मथुरानाथ भट्ट

राजस्थानी और हिन्दी

२३ मुहता नैणसीरी ख्यात, भाग २, मुहता नैणसीकृत, सम्पा०–श्रीबद्रीप्रसाद साकरिया ।
२४ गोरा बादल पदमिणी चऊपई कवि हेमरतनकृत ,, श्रीउदयसिंह भटनागर ।
२५. राजस्थानमें सस्कृत साहित्यकी खोज, एस आर भाण्डारकर, हिन्दीअनुवादक–श्रीब्रह्मदत्त त्रिवेदी ।
२६ राठौडारी वशावली, सम्पा०–मुनि श्रीजिनविजय ।
२७ सचित्र राजस्थानी भाषासाहित्यग्रन्थसूची, सम्पादक–मुनिश्रीजिनविजय ।
२८ मीरा-बृहत्-पदावली, स्व० पुरोहित हरिनारायणजी विद्याभूषण द्वारा सकलित, सम्पा०–मुनि श्रीजिनविजय
२९ राजस्थानी साहित्यसंग्रह, भाग ३, सपादक–श्रीलक्ष्मीनारायण गोस्वामी ।
३० सूरजप्रकास, भाग २, कविया करणीदानकृत, सम्पा०–श्रीसीताराम लाळस ।
३१. सूरजप्रकास, भाग ३, कविया करणीदानकृत सम्पा०–श्रीसीताराम लाळस ।
३२ मत्स्य प्रदेश की हिन्दी-साहित्य को देन—डॉ० मोतीलाल गुप्त ।
३३ रुक्मिणी-हरण, सांयाजी झूला कृत, सम्पा० श्री पुरुषोत्तमलाल मेनारिया ।

विशेष–पुस्तक-विक्रेताओं को २५% कमीशन दिया जाता है ।